चन्दामामा
बच्चों का मासिक पत्र

Photo by T. S. Satyan

पुरस्कृत परिचयोक्ति

'धर होंठों पर थाल घुमाऊँ!'

प्रेषिका : कुमारी राज कौल, भीटंडी

Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
(Rule 8 Form IV), Newspapers (Central) Rules, 1956

1.	*Place of Publication*	:	'CHANDAMAMA BUILDINGS' 2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
2.	*Periodicity of Publication*	:	MONTHLY 1st of each Calendar month
3.	*Printer's Name*	:	B. NAGI REDDI, Managing Director, The B. N. K. Press (Pvt) Ltd.
	Nationality	:	INDIAN
	Address	:	2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
4.	*Publisher's Name*	:	B. NAGI REDDI, Managing Proprietor, CHANDAMAMA PUPLICATIONS
	Nationality	:	INDIAN
	Address	:	2 & 3, Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
5.	*Editor's Name*	:	CHAKRAPANI (A. V. Subba Rao)
	Nationality	:	INDIAN
	Address	:	2 & 3. Arcot Road, Vadapalani, Madras-26
6.	*Name & Address of individuals who own the paper*	:	B. NAGI REDDI, Sole Proprietor

I, B. Nagi Reddi, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

28th February, 1957

B. NAGI REDDI,
Signature of the Publisher

चन्दामामा

मार्च १९५७

ईश्वर के सम्मुख सब बराबर . . .

"मंदिर में प्रवेश करना आध्यत्मिक क्रिया है जो अछूतों को स्वतंत्रता का सन्देश देगी और उन्हें विश्वास दिलाएगी कि वे परमात्मा के सम्मुख जातिभ्रष्ट नहीं है।"
महात्मा गांधी

भारतीय संविधान ने अस्पृश्यता का उन्मूलन कर सब व्यक्तियों को नागरिक और सामाजिक अधिकार समान दिए हैं।

कोई भी व्यक्ति किसी को सार्वजनिक पूजा के स्थान में जो कि उसी धर्म के अनुयायी अन्य व्यक्तियों के लिए खुले हैं, प्रवेश करने से मना नहीं कर सकता। अथवा वह सार्वजनिक पूजा के स्थान पर पूजा करने, प्रार्थना करने, या कोई अन्य धार्मिक सेवा के कार्य करने के अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता, क्योंकि ये अधिकार एक ही धर्म के सब अनुयायियों के लिए समान हैं।

छूत छात को छोड़ो—दिल को दिल से जोड़ो

DA-56/208

देखिए !

'कोडक' कैमरा इस्तेमाल करना कितना आसान है!

'कोडक' के बनाये हुए इन सस्ते और उम्दा कैमरों में इन बढ़िया 'कोडक' कैमरों में से किसी के भी ज़रिए सुन्दर चित्र खींचना बहुत ही मामूली-सी बात है। आपको सिर्फ़ तीन काम करने पड़ते हैं :

१. व्यूफ़ाइण्डर में से उस विषय को देखिए जिसका चित्र आप खींचना चाहते हैं।
२. फ़ासले का पक्का निश्चय कर लीजिए (जिसका चित्र लेना है उससे कम से कम ६ फ़ुट दूर रहिए)।
३. इसके बाद हलके से बटन दबा दीजिए।

घर में स्नैप लेने या सुन्दर रंगीन चित्रों के लिए कैमरे में एक फ़्लैशहोल्डर व बल्ब लगाइए और फिर ऊपर के तरीके से चित्र खींचिए। कहिए, है न आसान!

'कोडक' के तरह-तरह के सस्ते और उम्दा कैमरे मिलते हैं। उनमें से कुछ यहाँ दिखाये गये हैं... आपके कोडक-विक्रेता के पास और भी बहुत-से हैं। उससे आप ऐसा कैमरा माँगिए जो आपकी ज़रूरत के मुताबिक़ हो, और आपको पुसाये भी!

ब्राउनी 'कैस्टा' कैमरा

इसमें पोर्ट्रेटों के लिए क्लोज़-अप लैंस और घर के बाहर चित्रों के लिए फ़िल्टर हैं; फ़्लैश की व्यवस्था भी है। इसीलिए इस उम्दा कैमरे से सभी प्रकार के चित्र खींचे जा सकते हैं!

मूल्य केवल ... रु० ३१/८
रखने का केस ... रु० ५/१२
फ़्लैशहोल्डर ... रु० ११/-

'ब्राउनी' १२७ कैमरा

अगर आप बिलकुल आसानी से स्नैप लेना चाहते हैं तो यह कैमरा सबसे अच्छा है। पकड़ने में आसानी के लिए इसका आकार मिनियेचर कैमरे-जैसा है। 'आय-लेवल' व्यूफ़ाइण्डर-वाला हलका-फुलका कैमरा। गले में लटकाने की डोरी के साथ रु० १८/१२
कैनवास का केस ... रु० ३/८

दामों में बिक्री-कर शामिल नहीं है।

६:-२० 'ब्राउनी'

से कोई भी एक खरीदिए

कैमरा, मॉडल ।

छः-२० 'ब्राउनी' कैमरे दुनियाभर में मशहूर हैं। चुनने के लिए ४ अनुपम मॉडल। ये कैमरे २८ रुपये जैसी मामूली क़ीमत तक में मिलते हैं। इनमें से तीन मॉडलों में फ्लैशहोल्डर जोड़ने की व्यवस्था रहती है और क्लोज़-अप लैंस लगा होता है। दो मॉडलों में पीला फ़िल्टर भी होता है।

'ब्राउनी' रिफ़्लेक्स कैमरा

जुड़वाँ लैंसोंवाले इस कैमरे के बड़े व्यूफ़ाइण्डर में आप चित्र का लगभग पूरा आकार पहले ही देख सकते हैं। 'कोडक' फ्लैशहोल्डर लगाके घर में या अँधेरा होने पर भी चित्र खींच सकते हैं। मूल्य केवल ... रु० ४५/४
रखने का केस ... रु० ३/४
फ्लैशहोल्डर ... रु० २१/-

कोडक लिमिटेड (सीमित दायित्व सहित इंग्लैण्ड में संस्थापित) बम्बई – कलकत्ता – दिल्ली – मद्रास

ग्राहकों को एक जरूरी सूचना !

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिये। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न होगा, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। पता बदल जाने पर तुरन्त नए पते की सूचना देनी चाहिए। यदि प्रति न मिले तो १० वीं तारीख से पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद में आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

व्यवस्थापक, “चन्दामामा.”

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

“चन्दामामा” में कई कहानियाँ, कभी कभी ऐसी जाती हैं, जिनके बारे में सम्भव है, कुछ पाठक पहिले ही जानते हों, जैसे “नाविक सिन्दबाद”, “बेताल की कहानियाँ”। पर कई बच्चे ऐसे भी होंगे, जिनके लिये ये कहानियाँ बिल्कुल नई हैं। बड़े स्वयं सुना नहीं पाते हैं। बच्चों की उत्सुकता बनी रहती है, इसलिये हम आजकल की शैली में इन पुरानी कहानियों का पुनः मुद्रण कर रहे हैं।

समय की गति कुछ ऐसी होती है कि जब हम बड़े हो जाते हैं तो उन कहानियों में प्रायः दिलचस्पी नहीं दिखाते, जिनको बचपन में हम सुनते सुनते अघाते नहीं थे; यह स्वाभाविक है। पर ज्यों ज्यों बच्चे युवक होते जाते हैं, त्यों त्यों पुरानी कहानियाँ नया चोगा पहिनती जाती हैं। भले ही ऐसी कथायें बचपन में पढ़ी हों, पर सबको ये कथायें याद हैं, यह नहीं कहा जा सकता। इसलिये बड़े-बूढ़े भी भूली भुलाई कहानियों को “चन्दामामा” में पढ़कर फिर याद कर सकते हैं।

अंक : ७

मार्च १९५७

वर्ष : ८

मुख - चित्र

सत्यवान के साथ विवाह करने के बाद सावित्री अपने वस्त्र और अलंकार को छोड़ वल्कल वस्त्र पहिन कर, सास-ससुर और पति की सेवा करती वन में रहने लगी। सत्यवान की मृत्यु के अभी चार दिन थे कि उसने तीन दिन तक उपवास किया। तीन दिन के व्रत के बाद, उसने चौथे दिन भोजन न किया।

जब उस दिन सत्यवान, जंगल में फल-पुष्प लाने के लिए जा रहा था तो वह भी उसके साथ गई। जंगल में फल-पुष्प चुनते, लकड़ियाँ काटते, सत्यवान ने कहा कि सिर दर्द हो रहा है। उसके हाथ से कुल्हाड़ी नीचे गिर गई। वह विश्राम करने के लिये सावित्री के पास गया। सावित्री की गोदी में सिर रख जब वह लेटा हुआ था, तो यम प्रत्यक्ष हुआ।

यम को, अपने पति के प्राण ले जाता देख सावित्री ने उसका पीछा किया। यम ने उसको वापिस जाने के लिए कहा, पर वह न मानी। उसको वापिस भेजने के लिए यम ने उसको कई वर दिये।

वर ये थे: सावित्री के ससुर को पुनः दृष्टि-प्राप्ति, राज्य-प्राप्ति और सावित्री के पिता को सौ पुत्रों की सन्तान। तब भी सावित्री उसके साथ चलती गई। आखिर यम ने वर दिया कि सावित्री के सौ पुत्र हों। 'पति के जाने के बाद, पतिव्रता कैसे बच्चों को जन्म दे सकेगी?' सावित्री ने यम से पूछा। यम को कुछ न सूझा कि क्या करे। आखिर सत्यवान को जिलाकर उसने सावित्री को पति-दान दिया।

सावित्री जब सत्यवान के पास लौटी तो वह ऐसे उठा, जैसे कि सोकर उठ रहा हो! फिर वे दोनों मिलकर आश्रम चले गये।

यम के वर के प्रभाव से सावित्री के ससुर फिर देखने लगे। उन्हें फिर राज्य भी मिल गया। अश्वपति के सन्तान हुई। सत्यवान साल्व देश का राजा बनकर बहुत दिनों तक परिपालन करता रहा।

नीच जीवन

ब्रह्मदत्त उन दिनों काशी का राजा था। बोधिसत्व सुतन नामक गरीब आदमी के रूप में पैदा हुए। वे बड़े हुए। और अपनी कमाई से माँ-बाप का पालन-पोषण करने लगे थे। कुछ समय बाद सुतन के पिता का देहान्त हो गया। सिर्फ़ माँ ही रह गई। सुतन दिन भर मेहनत करता; पर जो कमाता न उससे उसका गुज़ारा होता, न उसकी माँ का ही। दोनों को बड़ा कष्ट होता।

उस देश के राजा को शिकार का बड़ा शौक था। वह प्राय: जंगल जाकर, जंगली जानवरों का शिकार किया करता। एक बार एक हरिण का पीछा करता राजा बहुत दूर जंगल में चला गया। आख़िर उसे जैसे तैसे बाण से मार दिया। आसपास राजा का कोई सैनिक न था। इसलिये राजा को ही उस हरिण को कन्धे पर डालकर चलना पड़ा।

ठीक दुपहर थी। कड़ी धूप पड़ रही थी। शिकार की थकान तो थी ही, फिर हरिण को कन्धे पर ढोने से राजा और भी थक गया। तब वह एक विशाल बड़ के पेड़ की छाया में हरिण को पटककर स्वयं सुस्ताने लगा।

दूसरे क्षण राजा के सामने एक राक्षस ने प्रत्यक्ष होकर कहा—"मैं तुझे खा जाऊँगा।" कहता हुआ वह उस पर लपका।

"तुम कौन हो! मुझे खाने का तुम्हें क्या अधिकार है!" राजा ने राक्षस से पूछा।

"यह पेड़ मेरा है। इस पेड़ के नीचे जो कोई आता है, उन्हें मुझे खाने

का अधिकार है। मैं ब्रह्म राक्षस हूँ।" भूत ने कहा।

राजा सोचने लगा। थोड़ी देर बाद उसने राक्षस से पूछा—"क्या तुम आज ही खाना खाओगे? या रोज़ तुम्हें भोजन चाहिये?"

"मुझे रोज़ खाना चाहिये।" ब्रह्म राक्षस ने कहा।

"तो आज मुझे खा जाने से तुम्हारी भोजन की समस्या हल नहीं हो जायेगी। और आज अगर तुमने इस हरिण को खाकर मुझे छोड़ दिया तो मैं तुम्हारी भोजन की समस्या रोज़ हल कर दूँगा। मैं इस देश का राजा हूँ। इसलिये मैं भोजन के अलावा, एक आदमी भेज सकता हूँ।" राजा ने कहा।

राक्षस यह सुनकर बड़ा खुश हुआ। "अच्छा तो मैं तुझे छोड़े देता हूँ। पर जिस दिन आहार नहीं पहुँचेगा मैं उस दिन तुझे ही हज़म कर लूँगा।"

राजा ने हरिण राक्षस को दे दिया। राजधानी पहुँचकर उसने सारी बात मन्त्री से कही।

"महराज! आप फ़िक्र न कीजिये। हमारे जेलों में बहुत से अपराधी हैं। उनमें से रोज़ एक एक को राक्षस के पास उसके भोजन के लिए भेज देंगे।" मन्त्री ने कहा।

तब से मन्त्री, रोज़ एक क़ैदी को जंगल में बढ़ के पेड़ के पास भोजन के साथ भेजता और राक्षस भोजन के साथ क़ैदी को भी खा जाता।

कुछ समय बाद सब क़ैदी ख़त्म हो गये। मन्त्री सोच न पाया कि क्या किया जाये। आख़िर उसने राज्य भर में यह घोषणा करवा दी—

"जंगल में रहने वाले भूत के लिए जो कोई भोजन लेकर बढ़ के पेड़ के पास जायेगा, उसे राजा हज़ार रुपया इनाम देगा।"

यह घोषणा सुन सुतन ने सोचा—"क्या आश्चर्य है! मैं खून पसीना एक करता हूँ और मुझे दो-चार पैसे से अधिक नहीं मिलता। ब्रह्म राक्षस को भोजन ले जाने से इतने रुपये देंगे!"

उसने माँ से कहा—"माँ! मैं भोजन लेकर भूतों वाले बढ़ के पेड़ तक ले जाऊँगा....उस रुपये से तेरा अच्छी तरह गुज़ारा हो जायेगा!"

"अब भी मुझे क्या कमी है? मैं आराम से हूँ। तुझे कहीं जाने की ज़रूरत नहीं है।"—सुतन की माँ ने कहा।

"कोई ख़तरा नहीं है। मैं सुरक्षित वापिस आ जाऊँगा।"—सुतन माँ को समझा-बुझाकर राजा के पास गया।

"महाराज! यदि आपने चप्पल, छाता, तल्वार, एक सोने का बर्तन दिलवाये तो मैं जंगल में भूतोंवाले बढ़ के पेड़ तक भोजन ले जाऊँगा।"—सुतन ने बड़े विनीत भाव से राजा से कहा।

"भोजन ले जाने के लिये इन सब की क्या ज़रूरत है?"—राजा ने पूछा।

"ब्रह्म राक्षस को हराने के लिये।"—सुतन ने उत्तर दिया।

फिर तल्वार कमर में बाँधकर, चप्पल पहिन, छाता निकाल, सोने के बर्तन में भोजन लेकर, दुपहर को भूतोंवाले बढ़ के पेड़ के पास गया। वह पेड़ की साया में नहीं गया, बाहर छाते के नीचे खड़ा रहा।

उसको देखकर ब्रह्म राक्षस ने कहा—"धूप में बड़ी दूर से आये हो। इधर छाया में आकर आराम करो।"

"नहीं, मुझे तुरत वापिस चले जाना है। यह लो तुम्हारे लिये भोजन लाया हूँ।" कहते हुए उसने सोने के बर्तन को धूप में रख दिया; फिर तल्वार से उसको छाया में सरका दिया।

सुतन की समझ देखकर ब्रह्म राक्षस खौल उठा। "मैं आहार और आहार लानेवाले को भी खाता हूँ।" वह गरजा।

"तू मुझे नहीं खा सकता। मैं तेरी पेड़ की साया में नहीं आया हूँ। मुझे खाने का तुझे क्या अधिकार है?" सुतन ने पूछा।

"सरासर धोखा है। मुझे तुझसे क्या वास्ता! मैं जाकर उस राजा को ही खा लूँगा।"—ब्रह्म राक्षस इधर उधर चहल-कदम करने लगा।

"तूने किसी जन्म में महापाप किया है। मृत होकर इस पेड़ पर आश्रय लिया है। इतना नीच जीवन बसर करते हुए भी तुझे अभी तक शर्म नहीं आई? अब से तुम भलमनसाहत से जिओ।" सुतन ने ब्रह्म राक्षस को समझाया।

ब्रह्म राक्षस ने खिन्न होकर पूछा—"तो मुझे क्या करने के लिये कहते हो?"

"मेरे साथ आ और हमारे नगर के द्वार पर रह। वहाँ रोज़ मैं तेरे लिए अच्छा भोजन भेज दूँगा। मनुष्य को मारकर खाने की बुरी आदत छोड़ दे।"—सुतन ने कहा।

ब्रह्म राक्षस ने वही किया।

सुतन को जीता जी वापिस आया देख, राजा को आश्चर्य हुआ। सुतन ने सारा वृत्तान्त राजा को सुनाया। राजा ने सन्तुष्ट होकर सुतन को अपना सेनापति नियुक्त किया। उसके बाद, सुतन की सलाह पर, वह सुख से राज्य करने लगा।

लोमड़ी और खरगोश

अरण्य में एक दिन, खरगोश हरिण के पास गया। हरिण, हरिण की पत्नी ने खरगोश का कुशल-क्षेम पूछकर कहा—"सुना है तूने लोमड़ी को खूब सताया है। लोमड़ी कह रही है कि वह तेरी ख़बर लेगी। ज़रा सम्भल कर रहना अच्छा है।"

खरगोश ने हँसकर कहा—मैं इस लोमड़ी को और सताऊँगा। यह मेरे पिताजी की ३० साल तक वाहन रही थी।"

जब अगले दिन लोमड़ी हरिण के घर गई तो उसे खरगोश की कही हुई बातें मालूम हुईं। लोमड़ी ने दाँत पीसकर कहा—"इस खरगोश के बाप का कब वाहन था? मैं उसके मुँह ही, तुम्हारे सामने कहलाऊँगा।" कहते हुए, सीधे खरगोश के घर गई।

खरगोश सोच ही रहा था कि लोमड़ी ज़रूर आयेगी। इसलिये दरवाज़ा बन्द करके वह अन्दर बैठा हुआ था। लोमड़ी ने आकर दो तीन बार दरवाज़ा खटखटाया। खरगोश ने धीमी आवाज़ में पूछा—"कौन है वहाँ? क्या लोमड़ी भैय्या हैं?"

"मैं तेरे लिये आई हूँ—जल्दी दरवाज़ा खोल।" लोमड़ी ने कहा।

"मैं बहुत बीमार हूँ। क्या ज़रा वैद्य को ला सकोगे?" खरगोश ने पूछा।

"नहीं, अभी नहीं—आज हरिण के घर दावत है। तुझे लिवा लाने के लिये उन्होंने भेजा है। देरी मत करो!"

"मैं एक कदम भी नहीं उठा सकती।" खरगोश ने कराहते हुये कहा।

"मैं पकड़कर सहारा दूँगा।" लोमड़ी ने कहा।

"इतना बुला रहे हो! अगर तुमने मुझे अपने पीठ पर चढ़ने दिया तो

श्री सुमन कुमार जोशी

आऊँगा"—खरगोश ने कहा। लोमड़ी मान गई। पर खरगोश ने कई शर्तें लगाईं। जब तक लोमड़ी, अपनी पीठ पर ज़ीन रखकर, लगाम लगा कर तैयार न हो गई, खरगोश चलने को राज़ी न हुआ।

"तुझे हरिण के घर से कुछ दूर ही उतार दूँगा।" लोमड़ी ने कहा।

"अच्छा!" खरगोश ने कहा।

खरगोश, लोमड़ी के मन की बात ताड़ गई। उसने काँटेवाली एक डँड़ी ली। हरिण के घर से कुछ दूर लोमड़ी रुकी ही थी कि खरगोश ने उसे काँटेवाले डंडे से चुभाया। दर्द के कारण, लोमड़ी बाण की तरह दौड़ी। हरिण के घर पर भी न रुकी। दरवाज़े पर खड़े हरिण और हरिण की पत्नी यह देख कर हैरान हो गये।

कुछ दूर जाने के बाद, खरगोश बड़ी मुश्किल से उसे रोक कर फिर उसे हरिण के घर लाया। और सब के देखते देखते, हरिण के घर के सामने वाले एक खम्भे से बाँध दिया और स्वयं अन्दर चला गया।

थोड़ी देर बाद, खरगोश बाहर आया, और लोमड़ी पर सवार होकर उसे हाँकने लगा।

"देख, मैं तेरी क्या गत बनाती हूँ।" यह कह लोमड़ी एक निर्जन प्रदेश में भाग निकली। खरगोश भी उसके पीठ से कूद कर, झाड़ झँखाड़ों के पीछे रफ़ू चक्कर हो गया। लोमड़ी ने उसका पीछा किया। लोमड़ी उसे पकड़ने को ही थी कि खरगोश, एक पेड़ की खोल में घुस गया।

वह खोल बड़ा न था। पीछा करती करती लोमड़ी ने भी उसमें घुसना चाहा। क्योंकि खोल छोटा था, इसलिये उसके सिर पर चोट लगी और लोमड़ी गिर गई।

[२]

[अवन्ती नगर में तीन भाई रहा करते थे। छोटा भाई, पिंगल मछली पकड़ने के लिए तोता झील गया। वहाँ मंडन नाम के व्यक्ति ने आकर उससे कहा कि वह हाथ पैर बाँधकर उसको झील में फेंक दे। पिंगल ने वह किया। नगर में, काँचन मिश्र के पास जाकर उसने सौ मुहरें ले लीं। बाद में:]

काँचन मिश्र की दी हुई सौ मुहरों को लेकर खुशी खुशी पिंगल दुकानदार के पास गया। पिंगल को देखते ही दुकानदार को यह समझने में देर न लगी कि वह खुश था! "क्यों, पिंगल! लगता है तुम्हारा भाग्य खिल गया है! मालूम होता है, खूब मछलियाँ पकड़ी हैं!"

पिंगल ने दुकानदार की बातें सुनते ही अपनी खुशी में चाहा कि वह उसे बता दें कि उसने सौ मुहरें कैसे कमाई थीं। परन्तु उसे काँचन मिश्र की चेतावनी तुरत याद आ गई। वह संभल गया। "दस दिन बाद आज ही जाल में मछलियाँ फँसी हैं। पिछले दस दिन, ऐसा लगता था, जैसे दुर्भाग्य मेरा पीछा कर रहा था।"

दुकान में जितना उधार देना था, उसका हिसाब देखकर पिंगल ने पूरा का पूरा दे दिया। और ज़रूरी चीज़ें भी

मुहरें देखकर, उसकी माँ बहुत चकित हुई। "इतना रुपया कैसे कमाया है बेटा ?"—माँ ने पूछा।

पिंगल ने बिना कुछ छुपाये, सब कुछ माँ को सुना दिया। माँ ने घबराते हुए कहा—"पिंगल! जो तुमने किया है, अगर वह किसी को मालूम होगया तो ख़तरा है। अब से तुम तोता झील की तरफ़ न जाना। कौन जाने, क्या होगा ! सावधान रहना बेटा !"

माँ को डरता देख, पिंगल ने हँसकर कहा—"जो मैंने किया है, वह अपराध कैसे है ! वह आदमी, खुद हाथ-पैर बाँधकर झील में डूबकर मर गया। परन्तु यह बात किसी को कहे बिना भी रहा जा सकता है। इस रहस्य को मैं छिपाकर रखूँगा। तुम बेफ़िक्र रहो।"

"तुम अपने भाइयों के बारे में तो जानते ही हो। देखो, उनके कानों में यह बात न पड़े।" माँ ने कहा।

दस दिन बाद पिंगल, उस दिन आराम से सोया। वह अगले दिन सवेरे, जाल लेकर तोता झील की तरफ़ गया। वह झील में दुपहर तक जाल फेंकता रहा

ख़रीद लीं। वह जब घर पहुँचा तो दीवार के सहारे बैठे उसके दोनों भाई ऊँघ रहे थे। माँ दौड़कर सामने आई। पिंगल ने दुकान से लाई हुई चीज़ों को माँ को देकर कहा—"आज भाग्य ने साथ दिया है। जल्दी खाना बनाओ। बहुत भूख लग रही है।"

थोड़ी देर में भोजन तैयार हो गया। पिंगल के साथ जीवदत्त और लक्षदत्त ने भी जल्दी जल्दी भोजन किया और खुशी खुशी बाहर चले गये। भाइयों के बाहर जाते ही, जेब में से मुहरें निकालकर पिंगल ने माँ के सामने बिछा दीं।

पर एक मछली भी न फँसी। वह निराश हो, वापिस घर जाने की सोच रहा था कि दूरी पर, तेज़ी से घोड़े पर आता हुआ सवार दिखाई दिया।

पिंगल घबरा गया। घुड़सवार ठीक मंडन की तरह था। कहीं झील में डूबा हुआ, आदमी भूत तो नहीं हो गया है? यह क्या बात है, कुछ समझ में नहीं आ रहा है।" पिंगल यों सोचने लगा। इस बीच, घोड़ा पास आ गया। सवार ने हँसते हुए, घोड़े पर से उतरकर कहा—"पिंगल! मैं तुम से एक मदद चाहता हूँ।"

पिंगल घबराता घबराता उसकी तरफ़ देखता रहा।

शक्ल-सूरत तो उसकी मंडन जैसी ही थी; परन्तु उम्र में वह उससे छोटा लगता था। घोड़ा भी किसी और रंग का था। पिंगल तब जान गया कि वह मंडन का भूत न था।

"आप मेरा नाम कैसे जानते हैं? आप मुझ से क्या मदद चाहते हैं?" पिंगल ने पूछा।

वह प्रश्न सुनते ही घुड़-सवार ज़ोर से हँसा। उसने कहा—"मैं तुम्हारा काम कैसे जानता हूँ; मैं किस काम पर आया हूँ—यह सब बातें ऐसी नहीं हैं जो तुम न जानते हो। मेरा नाम अनुरूप है। इसके पहिले तुम्हारी मदद माँगनेवाला मंडन मेरा भाई ही था।"

"मंडन आपका भाई था? वह कहाँ है?" पिंगल ने नादानी से पूछा।

अनुरूप ने खिल खिलाकर हँसते हुए, झील की ओर इशारा किया। "शायद, मंडन वहाँ है,—नहीं तो इस झील के जलचरों का आहार बन गया होगा। क्यों क्या कहते हो? ठीक है मेरी बात?"
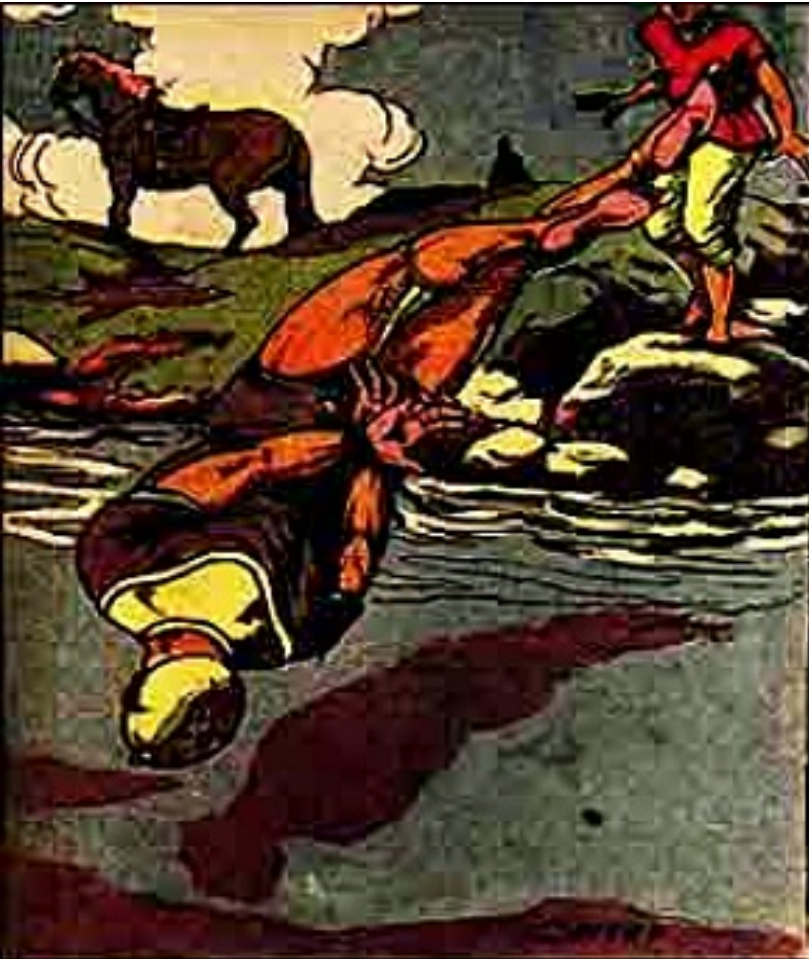
"—तो जो कुछ कल यहाँ गुज़रा था, वह सब आप जानते हैं?" पिंगल ने कहा।

"हाँ, मैं सब जानता हूँ। मैं भी तुम से सहायता चाहता हूँ।"—अनुरूप ने कहा।

"उसमें क्या है? ज़रूर करूँगा; पर इस बार आपको दो सौ मुहरें देनी होंगी।" पिंगल ने कहा।

अनुरूप ज़ोर से हँसा। पिंगल का कन्धा थपथपाते हुए उसने कहा—"हाँ, पहिले ही सन्देह कर रहा था कि तुम कहीं दो सौ मुहरें न माँग बैठो। इसलिये काँचन मिश्र के यहाँ इसका प्रबन्ध कर आया हूँ। पर देखो तुम यह क्यों सोचते हो कि मैं जीता जी झील में से फिर नहीं निकलूँगा?"

फिर पिंगल ने रस्सी लेकर उसके हाथ बाँध दिये। उसके बाद उसको कन्धे पर डालकर, झील के किनारे गया और वहाँ से उसको अन्दर धकेल दिया। अनुरूप ने झील में गिरने से पहिले पिंगल से कहा—"पिंगल! झील में धकेल देने के बाद अगर मेरा सिर पहिले तैर आये तो जाल फेंककर मुझे बाहर खींच लेना।"

पिंगल झील के किनारे ही जाल लिये तैयार खड़ा था। झील में थोड़ी देर तरंगें उठीं, फिर रुक गईं। दो-तीन मिनट बाद, पानी में बुल्बुले दिखाई दिये और अनुरूप के पैर तैर आये।

"बिचारा मर गया है।" यह सोच, पिंगल अनुरूप के घोड़े पर सवार होकर, बिना पीछे देखे, शहर चला गया। काँचन मिश्र, उसको थोड़ी दूर पर देखकर चिल्लाया "लोभ दुःख का कारण है।" फिर उसने गिनकर दो सौ मुहरें उसे दे दीं।

"लोभ किसको है? मुझे? इन दो सौ मुहरों के लिए कितनी मेहनत कर रहा

हूँ, क्या तुम जानते हो?" पिंगल ने काँचन मिश्र से पूछा।

काँचन मिश्र ने सिर हिलाते हुए कहा—"लोभ तुम्हें नहीं है, उनको है, जो मर गये हैं। जो काम तुम कर रहे हो, अगर किसी को मालूम हो गया तो अनुमान करना कठिन नहीं है कि उसका परिणाम कितना ख़तरनाक होगा। तुम में भी लोभ धीरे धीरे सिर ऊँचा कर रहा है। क्योंकि तुमने कल सौ मुहरें ली थीं और आज दो सौ मुहरें।"

"कल तीन सौ मुहरें! अगर किसी ने इससे कम दिया तो मैं किसी की, मरने के लिए मदद नहीं करूँगा।" पिंगल यह कहता चला गया।

उस दिन रात को, पिंगल ने अपनी माँ को दो सौ मुहरें दीं। माँ उसको देखकर, डर के कारण काँप उठीं। "बेटा! कम से कम, अब तो उस तोता झील की तरफ़ जाना बन्द कर दो। मैं जाने क्यों डर रही हूँ।"

"कुछ डर नहीं है! पर देखना तो यह है कि बात किसी को न पता लगे।" पिंगल ने धीरे से कहा।

उस दिन रात को पिंगल ठीक तरह सो न सका। सवेरे सवेरे जाल कन्धे पर डालकर तोता झील गया। वह यद्यपि झील में जाल डाल रहा था तो भी उसकी नज़र मैदान की ओर थी। वह बार बार उधर देख रहा था।

ठीक दुपहरी में, मैदान में धूल उड़ाता आता, एक घुड़सवार पिंगल को दिखाई दिया। देखते देखते उस घुड़-सवार ने पिंगल के पास आकर कहा—"पिंगल! मेरा नाम पक्षपाद है। मेरी एक मदद करनी होगी।"

"मदद? ज़रूर करूँगा। इस झील में गिर कर जो कोई आत्म-हत्या करना चाहता है, उन सब की मदद करना ही मेरा काम है। इसके लिए मुझे तीन सौ मुहरें देनी होंगी।"

"हाँ, हाँ! अगर मैं मर गया तो काँचन मिश्र तीन सौ मुहरें दे देगा।" कहते हुए पद्मपाद ने, घोड़े पर से लटकती हुई रस्सी लेकर पिंगल को दी।

पिंगल ने रस्सी लेकर, पद्मपाद के हाथ बाँध दिये। उसको कन्धे पर डाल, झील के पास ले गया और उसको झील में डाल दिया। "बिचारा मर गया है—" कहता, कहता, घोड़े के पास गया।

पिंगल ने झील की तरफ़ भी न देखा। घोड़े पर बैठकर वह जा रहा था कि उसको पद्मपाद का चिल्लाना सुनाई दिया। "पिंगल! जाल फेंक कर मुझे जल्दी बाहर निकालो। तुम्हारा भला होगा।"

पिंगल घोड़े से उतरा और झट जाल फेंक कर, उसने पद्मपाद को बाहर निकाला। पद्मपाद हाँफता हाँफता बाहर आया। उसके हाथ में दो मगर के बच्चे थे। पिंगल, चकित हो, उनके बारे में पूछना ही चाहता

था कि इतने में पद्मपाद ने घोड़े के पास जाकर उस पर रखे काँच का मर्तबान लेकर, उसमें उन बच्चों को डाल दिया।

पिंगल ने पद्मपाद और उन मगर के बच्चों की तरफ़ सन्देह से देखा। "पद्मपाद! तुम बहुत भाग्यशाली हो। जीवित बाहर निकल आये हो। तीन सौ मुहरों के बारे में क्या किया जाय?"

पद्मपाद ने प्रेम से पिंगल का आलिंगन किया। "पिंगल! तीन सौ मुहरों की बात क्यों कहते हो? मैं तुम्हें लाखों, करोड़ों मुहरें दूँगा। संसार में सबसे बड़ा धनी बना दूँगा। पर तुम्हें मेरे साथ भल्लूक पर्वत तक आना होगा। क्यों आओगे मेरे साथ?"

"भल्लूक पर्वत! मैं तो उसका नाम सुनते ही डर जाता हूँ। सुना है कि वहाँ भूत रहते हैं।" पिंगल ने कहा।

"वे भूत-पिशाच तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। इस संसार में, तीन बड़े मान्त्रिक हैं। उनमें से दो को तुमने स्वयं झील को बलि दे दिया है और तीसरा मैं हूँ।" पद्मपाद ने कहा।

"मुझे कुछ समझ में नहीं आया।" पिंगल ने कहा।

"क्योंकि मैं तुम्हारी सहायता चाहता हूँ, इसलिये सुनो, सारी बातें तुम्हें सुनाता हूँ।" पद्मपाद ने यों कहा :

हम तीन भाई हैं। हमारा पिता, बड़ा मान्त्रिक था। उन्होंने अपनी मन्त्र-शक्ति से कई का उपकार किया। कई का अपकार भी किया। परन्तु उन्होंने छुटपन से ही बिना किसी पक्षपात के, हम तीनों को समान रूप से मन्त्र-विद्या सिखाई। मरने से पहिले भी उन्होंने हम तीनों को बराबर ज़मीन-जायदाद बाँट दी। परन्तु वह पुस्तक, जिसमें मन्त्र-विद्या लिखी हुई है, किसी को न दी। उन्होंने इतना कहा— "जो तुम में से सबसे अधिक शक्तिशाली होगा, उसी को यह मिलेगी।" यह कह कर वे मर गये।

उनके मरने के बाद, हम भाईयों में मन-मुटाव हो गया। हम में से हरेक ने वह पुस्तक लेनी चाही। आपस में तू तू मैं मैं होने लगी। बात इतनी बढ़ी कि हम एक दूसरे पर मन्त्र-शक्ति का उपयोग करने लगे।

हम एक दूसरे को मारने का प्रयत्न कर ही रहे थे कि हमारे पिता जी के गुरु आए। वे हमारे झगड़े को देखकर दुःखी हुये। तीनों को एक जगह बिठाकर, उन्होंने कहा - "पिता जो पुस्तक छोड़ गये हैं, उसके बारे में तुम नहीं जानते; इसलिये ही झगड़ रहे हो। तुम्हारे पिता ने कहा तो है कि जो तुम में सबसे अधिक शक्तिशाली होगा, उसी को वह पुस्तक मिलेगी। इसलिये अगर तुम उस पुस्तक में लिखी मन्त्र-शक्ति जानना चाहते हो तो पहिले तुम्हें बहुत कुछ करना होगा। हमने पूछा कि वह क्या है, तो उन्होंने यों कहा :

[अभी और है]

होली आई

श्री 'अरुण' भोपाल

धरती पर फिर होली आई,
नया वर्ष लेकर।
जला दिया पतझर को सबने,
नया हर्ष लेकर॥

घर-घर जलीं घरगुलीं सबने
नया अन्न भूना,
जन-जन के मन में उमंग—
उत्साह हुआ दूना,

हर प्राणों में आशाओं के
बहे नये निर्झर॥

आज मिलन का पर्व, प्यार के
सुन्दर फूल खिले,
आज हृदय से हृदय भूलकर
ईर्ष्या-द्वेष मिले;

मधुर प्रीति का फिर धरती पर
लहराया सागर॥

वह गुलाल की लाल चदरिया
उड़ने लगी नई,
सोहन के अबीर छिप करके
कमला लगा गई;

और उधर मोहन ने रंग दी
राधा की चूनर॥

माँ, माँ....!

श्री हरि कृष्णदास गुप्त 'हरि' दिल्ली-६

★

नींद परी की लोरी गा दे:
माँ, माँ, झटपट मुझे सुला दे।

ममता में भर, लहरा-लहरा,
रस दुलार बस छहरा-छहरा
आँचल ढक-ढक, फहरा-फहरा,

गोद-पालने झुला-झुला दे।
माँ, माँ, झटपट मुझे सुला दे।

दे-दे मृदु थपकी पर थपकी,
ले आवें जो लपकी-लपकी
बस गहरी झपकी पर झपकी,

रूठी निंदिया तुरत बुला दे।
माँ, माँ, झटपट मुझे सुला दे।

मीठे सपनों में सब तब भूलूँ;
चढ़ उड़न-खटोले नभ छू लूँ;
'चन्दामामा' से मिल फूलूँ;

गुब्बारे-सा मुझे फुला दे।
माँ, माँ, झटपट मुझे सुला दे।

मदालसा

शत्रुजित नाम के राजा का एक लड़का था। उसका नाम ऋतुध्वज था। वह बुद्धि में बृहस्पति, सौन्दर्य में मन्मथ, पराक्रम में अर्जुन था। उसका स्नेह पाने के लिए हर जाति के लोग आया करते। नाग लोक से नागराज के दो लड़के मैत्री के लिए ब्राह्मण युवकों का वेष धारण कर, ऋतुध्वज के पास आये। वे देखने में बहुत सुन्दर थे। यही नहीं, वे हमेशा ऋतुध्वज के निकट भी रहते। ऋतुध्वज भी उन्हें छोड़ कर एक क्षण नहीं रह पाता था। वे नागराज कुमार, दिन भर ऋतुध्वज के साथ रहते और रात को नागलोक वापिस चले जाते।

एक दिन नागराज ने अपने लड़कों से पूछा—"तुम दिन भर कहाँ रहते हो? रात को ही घर आते हो! क्या बात है?"

तब उन्होंने अपने पिता से कहा—"पिता जी! हम दिन भर ऋतुध्वज राजकुमार के पास रहते हैं। वह बुद्धिमान है, पराक्रमी है। उसके समान तीनों लोकों में कोई नहीं है।"

यह सुन नागराज बड़ा सन्तुष्ट हुआ। "तो तुम उसके लिये उसके योग्य उपहार क्यों नहीं ले जाते?" राजा ने पूछा।

"हम उसको भला क्या दे सकते हैं? अगर कभी उसको हमारी सहायता की ज़रूरत हुई, तो हम उसे अवश्य देंगे।" नागराज कुमारों ने कहा।

यह नागराजा भी मान गया।

इधर, अरण्य में, जब गालव मुनि तपस्या कर रहे थे, पातालकेतु नाम का राक्षस उन्हें सताने लगा। गालव यदि यज्ञ शुरू करता या साधना प्रारम्भ करता तो यह

श्री [illegible] मिश्र

राक्षस रूप बदल बदलकर उनको बाधा पहुँचाता। मुनि परेशान था। उसने आकाश की ओर देखकर एक लम्बी साँस छोड़ी। तुरन्त आकाश से एक अश्व मुनि के सामने उतरा। उसी समय एक आकाशवाणी इस प्रकार हुई :

"गाल्व! यह वह कुवलय अश्व है, जो तीनों लोकों में आ जा सकता है। इसको ले जाकर राजकुमार ऋतुध्वज को दो। वह इस घोड़े पर चढ़कर राक्षसों का संहार करेगा और तुम्हारे लिए तपस्या करने की सुविधा देगा।"

यह बात सुनते सुनते गाल्व मुनि उस अश्व पर चढ़कर शत्रुजित के पास गया और उससे ऋतुध्वज भेजने के लिए कहा। ऋतुध्वज घोड़े पर चढ़ कर, गाल्व मुनि के साथ उसके आश्रम में गया।

सायंकाल हो गया। गाल्व अग्नि की अर्चना करने के लिए बैठा था। उस समय, पातालकेतु जंगली सूअर का रूप रखकर, अग्निशाला में घुसा और गाल्व को डराने लगा। मुनि बालकों का चिल्लाना सुनकर घोड़े पर ऋतुध्वज आया। सूअर पर उसने एक बाण छोड़ा। जंगली सूअर
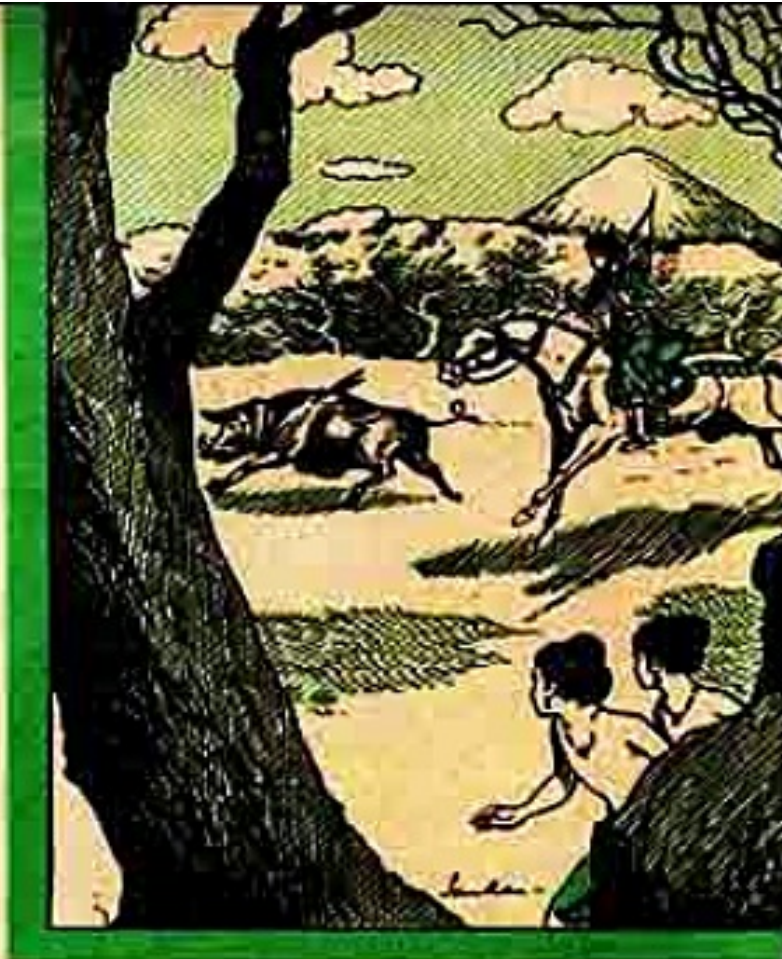
चीखता चीखता भागने लगा। ऋतुध्वज घोड़े पर चढ़ उसका पीछा करने लगा। भागते भागते सूअर एक गढ़े में कूदा....वह पाताल लोक जाने का रास्ता था।

क्योंकि कुवलय अश्व तीनों लोकों में जा सकता था, इसलिये ऋतुध्वज, उस गढ़े में से—जो गुफ़ा-सी थी, जाने लगा। कुछ दूर जाने पर उसको एक चमचमाता नगर दिखाई दिया। वह उस नगर में प्रवेश कर रहा था कि उसे एक स्त्री दिखाई दी। उस नगर में उस स्त्री के सिवाय कोई न था। सूअर का भी कहीं पता न था।

राजकुमार ने उस स्त्री के पास जाकर पूछा—"तुम कौन हो? यह कौन-सा नगर है? तुम्हारा नाम क्या है?" वह स्त्री बिना कोई जवाब दिये घर के अन्दर चली गई। यह क्या अजीब बात थी, यह जानने के लिए राजकुमार घोड़े पर से उतर कर अन्दर गया। अन्दर एक कमरे में, एक मोटे गद्दे पर देवकन्या-सी, एक स्त्री लेटी हुई थी। उसकी बग़ल में, बाहर दिखाई दी स्त्री पंखा झल रही थी।

ऋतुध्वज को देखते ही उस स्त्री ने कहा—"राजकुमार! यह कन्या विश्वावस नाम के गन्धर्व राजा की लड़की है। इसका नाम मदालसा है। इसको पातालकेतु नाम के राक्षस ने धोखा देकर यहाँ लाकर रखा है। आनेवाले त्रयोदशी के दिन वह इससे विवाह करने जा रहा है। मेरी यह सहेली आत्म-हत्या करना चाहती थी, पर मैंने उसे रोक दिया। मैं इसकी सहेली हूँ। मेरा नाम कुण्डला है। मदालसा की रक्षा करने के लिए भगवान ने तुम्हें यहाँ भेजा है।"

ऋतुध्वज ने भी अपनी कहानी कुण्डला को सुनाई। उसने मदालसा के मन की बात

ताड़कर, ऋतुध्वज से कहा—"इसकी रक्षा करने की जिम्मेवारी तुम्हारी है।" और मदालसा का हाथ राजकुमार के हाथ पर रख, उसने उनका पाणि-ग्रहण करवा दिया।

फिर ऋतुध्वज मदालसा को अपने घोड़े पर चढ़ाकर, जिस रास्ते से आया था, उस रास्ते से भूलोक की ओर निकल पड़ा। रास्ते में पातालकेतु अपनी सेना लिये तैयार खड़ा था। उसने उन दोनों को रोककर पूछा-—"कहाँ जा रहे हो! ठहरो।"

तुरत ऋतुध्वज ने अग्नि-बाण छोड़ा। सब राक्षस भस्म हो गये। ऋतुध्वज ने घर जाकर मदालसा से विवाह कर लिया। सवेरे से दुपहर तक ऋतुध्वज कुवलय अश्व पर चढ़कर मुनियों की रक्षा करता, भूलोक पर विचरता। वह अपनी पत्नी के साथ सुख से दिन काट रहा था। क्योंकि वह कुवलय अश्व पर सवार होकर घूमा-फिरा करता था, इसलिये उसको सब कुवलयाश्व कहने लगे।

ऋतुध्वज से मारे गये पातालकेतु का एक छोटा भाई था। उसका नाम तालकेतु था। उसने ऋतुध्वज से बदला लेने की सोची। क्योंकि उसने उसके भाई को मार
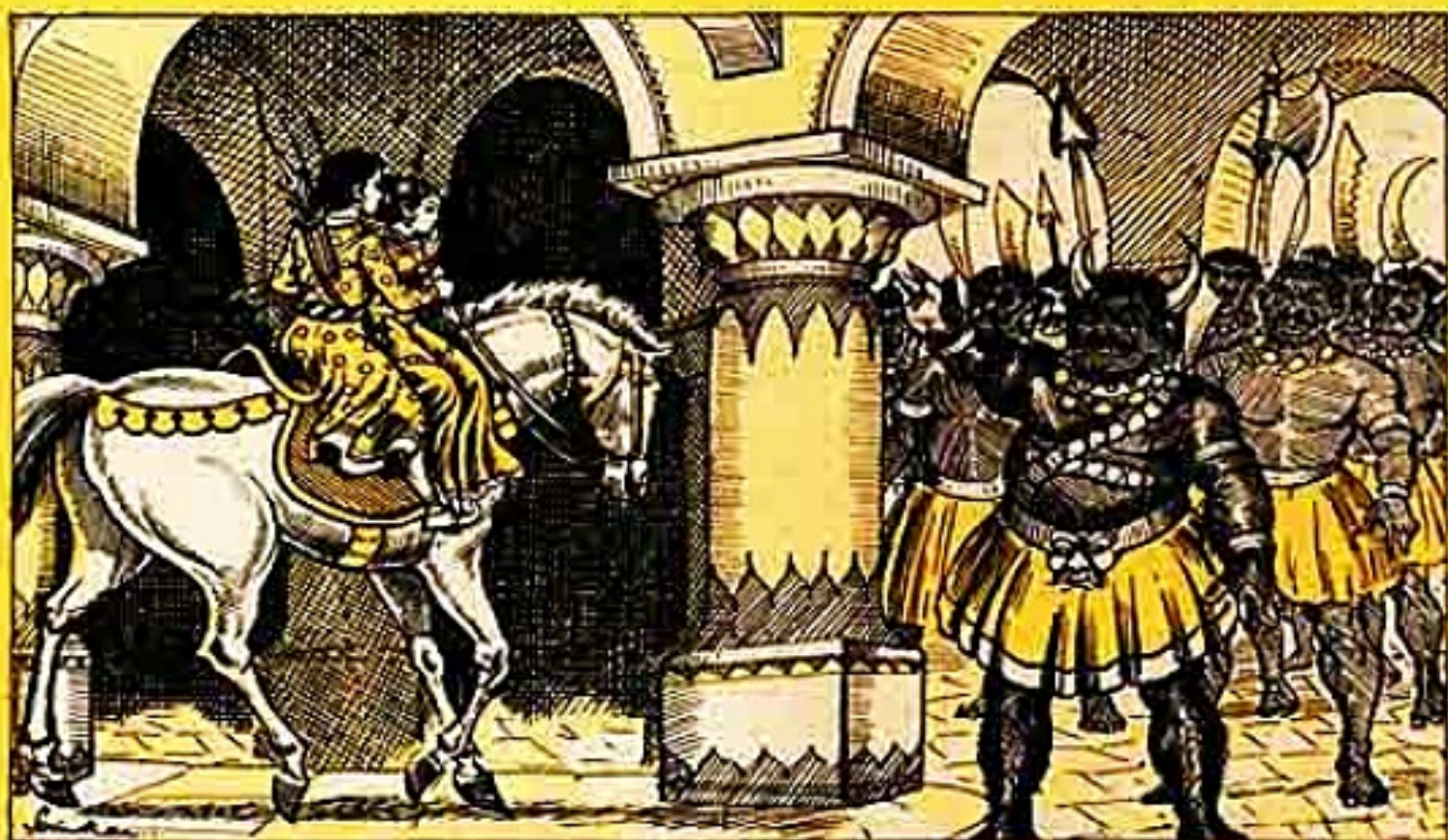
दिया था, और उस स्त्री से विवाह भी कर लिया था जिससे उसका भाई शादी करना चाहता था। वह ऋषि का रूप धारण कर, जमुना के किनारे तपस्या का ढोंग करने लगा।

एक बार राजकुमार आश्रमों का दौरा करता करता उस तरफ़ आया। उस कपटी मुनि को नमस्कार करके पूछा—"आपको कोई राक्षस तो नहीं सता रहे हैं?"

"बेटा! जब तुम जैसे पराक्रमी हमारी रक्षा कर रहे हो, तो हमें राक्षसों का क्या भय? फिर भी मैं तुमसे एक मदद चाहता हूँ। देने का वादा करो तो मैं बताता हूँ।" तालकेतु ने कहा।

"कहिये, ज़रूर करूँगा" राजकुमार ने कहा।

"मैं जल में डूबकर, जलयज्ञ करने जा रहा हूँ। उसके लिए मुझे सोना चाहिये। इसलिए मुझे अपने गले का हार दो और किनारे पर खड़े हो जाओ। और देखो कि कोई राक्षस न आये।"

राजकुमार ने उसका विश्वास कर लिया और अपना हार देकर, धनुर्बाण हाथ में लेकर वह खड़ा हो गया। राक्षस पानी की तह में तैरता, परले पार पहुँचा और सीधे शत्रुजित के पास गया। उसने उससे कहा—"महराज! मुझे एक दुख समाचार सुनाना पड़ रहा है। राक्षसों ने तुम्हारे लड़के को मार दिया है। मरते मरते तुम्हारे लड़के ने मुझे यह हार दिया। तपस्वियों को सोने से क्या वास्ता? यह आपको देने के लिए, और यह खबर पहुँचने के लिए यहाँ आया हूँ।" यह कहकर वह चला गया। यह पता लगते ही कि पति मर गये हैं, मदालसा ने भी प्राण छोड़ दिये। राजा और रानी भी बहुत दुःखी थे।

तालकेतु फिर जमुना में घुसा। और राजकुमार के पास जाकर उसने कहा—"बेटा! हमारा यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हो गया है, अब तुम जा सकते हो।"

ऋतुध्वज घोड़े पर सवार होकर अपने नगर वापिस चला गया। उसे कहीं भी हलचल न दिखाई दी। सर्वत्र शान्ति थी, कई उसकी ओर आश्चर्य से देख रहे थे। उसे कुछ समझ में न आया। वह राजमहल में आया। "बेटा! तुम जीवित हो।" कहते हुए माँ-बाप ने उसका आलिंगन किया। पर उनका दुःख समाप्त न हुआ।

"आप क्यों शोक कर रहे हैं? क्या हुआ?" उसने माँ-बाप से पूछा।—उन्होंने उसे बताया कि उसकी मृत्यु की ख़बर सुनकर मदालसा मर गई थी।

ऋतुध्वज के दुःख की सीमा न थी। पत्नी की मृत्यु के बाद भी अपने को जीवित पा, अपने को कोसने लगा। उसने आत्म-हत्या करने की ठानी, पर उसे महापाप समझकर, वह इरादा छोड़ दिया। "मैं इस जन्म में किसी और से विवाह न करूँगा।" उसने शपथ ली। राजकुमार का दुख देखकर उसके मित्र दुःखी हुए। नागराज के लड़कों ने अपने पिता के पास जाकर कहा—"अगर हम सहायता करना चाहते हैं तो इससे अच्छा मौका न मिलेगा। अगर हमने मदालसा को जैसे तैसे पुनः जीवित कर दिया, तो उसको बेहद खुशी होगी।" उन्होंने पिता को सारी घटना सुनाई।
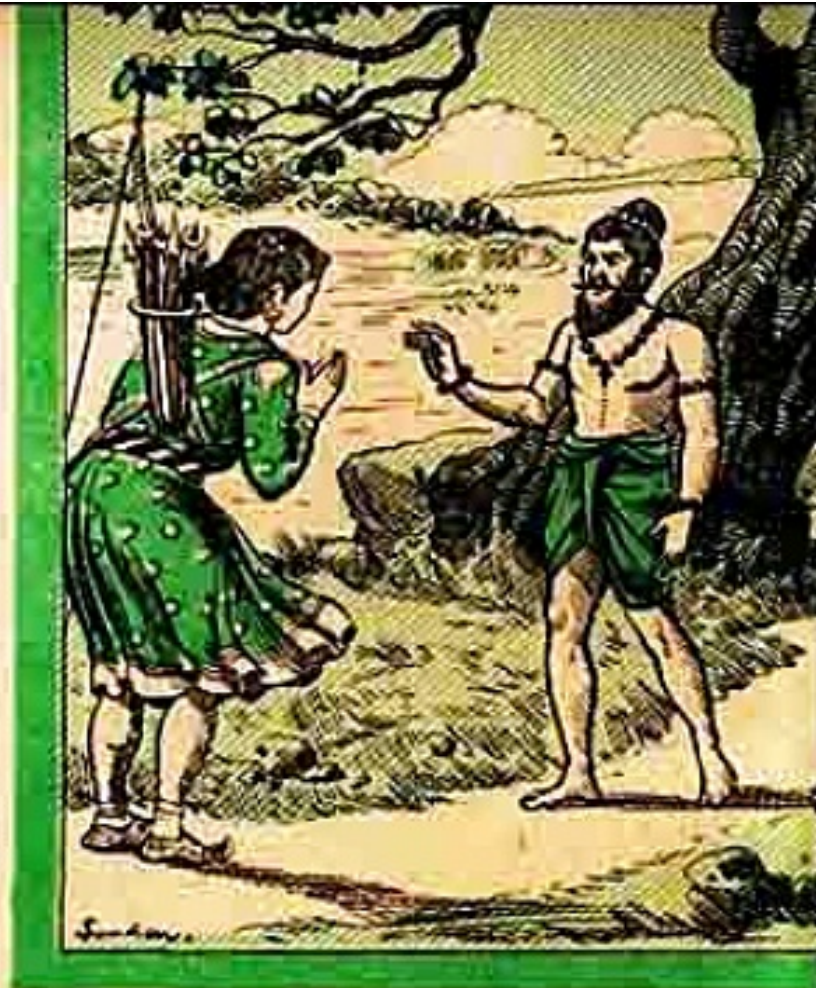
नागराज ने थोड़ी देर सोचकर कहा—"मैं भरसक कोशिश करूँगा।" उसने कभी सरस्वती देवी की पूजा करके गाने की अद्भुत प्रतिभा पाई थी। उसने कैलास जाकर शिव के समक्ष गाया।

शिव ने उसके संगीत पर मुग्ध होकर पूछा—"तुमने इतना सुन्दर संगीत सुनाकर मुझे सन्तुष्ट किया! बताओ, मैं तुम्हारी क्या मदद कर सकता हूँ?"

"भगवान! मदालसा को जीवित कर दीजिए" नागराज ने कहा।

"उसका तो दहन-संस्कार भी हो गया है, कैसे जीवित करूँ?"—शिव ने पूछा।

"भगवान! उसकी फिर से सृष्टि करो। मैं अपने आप राजकुमार को कन्या दान करना चाहता हूँ।"—नागराज ने कहा।

"तो तुम पिता का श्राद्ध करके, मध्य पिंड को खाओ। मदालसा तुम्हारे सिर में से फिर जन्म लेगी।"—शिव ने कहा।

नागराज ने उसी प्रकार किया। मदालसा उसके सिर में से जीवित निकल आई। नागराज ने उसे एक जगह छुपा दिया।

फिर उसने अपने लड़कों को बुलाकर कहा—"बेटो! तुम इतनी बार ऋतुध्वज के पास आते जाते रहते हो! पर तुम एक बार भी ऋतुध्वज को अपने यहाँ नहीं लाये। तुमने कभी भी उसका आतिथ्य न किया। यह भी क्या बात है? वह पत्नी के शोक में सूख रहा है।

यहाँ ले आओ। हम उसके मनोरंजन का प्रबन्ध करेंगे।"

नागकुमारों को पिता का यह प्रस्ताव जँचा। उन्होंने ऋतुध्वज के पास जाकर कहा—"मित्र! तुम एक बार भी हमारे घर नहीं आये। हमारे पिता जी ने तुम्हें बुलाकर ले जाने के लिए कहा है। नहीं आओगे?" उसे उन्होंने बहुत मनाया।

राजकुमार मान गया और उनके साथ चला गया। नागकुमार उसे गोमती नदी के पास ले गये। उन्होंने उसको भी अपने साथ डूबने के लिए कहा। पानी में डूबते ही नागकुमारों का ब्राह्मण वेष चला गया और वे नाग बन गये। उनके फण चम-चमाने लगे।

"यह क्या? क्या तुम ब्राह्मण नहीं हो? साँप हो? मुझसे यह बात क्यों छुपाये रखी?"—राजकुमार ने उनसे पूछा।

"मित्र! अगर तुम यह जान जाते कि हम नाग हैं, तो तुम हमें अपने पास नहीं फटकने देते। इसी डर से हमें तुम्हें धोखा देना पड़ा। हमें क्षमा करो।"—नागकुमारों ने कहा।

"अगर तुम नाग हो, तो कोई बात नहीं, मुझे इसकी परवाह नहीं है। अब भी तुम पहिले की तरह मेरे मित्र हो।"—राजकुमार ने कहा।

नागराज ने राजकुमार का खूब आतिथ्य किया। उसका मनोरंजन किया। उसने मणि सिंहासन पर उसको अपने पास बिठाया। "बेटा! मेरे लड़के हमेशा तुम्हारी ही याद करते रहते हैं। तुम जैसे दामाद पाने की इच्छा से ही मैंने तुम्हें यहाँ बुलवाया है। मुझे पता लगा है कि तुम्हारी पत्नी गुज़र गई है। तुम नौजवान हो, इसलिए तुम मेरी लड़की से विवाह कर लो। मैं बड़ा खुश होऊँगा—यही उपहार मुझे तुम्हें देना है।"—नागराज ने कहा।

"क्षमा कीजिये। मैंने शपथ कर रखी है कि सिवाय मदालसा के मैं किसी और से शादी न करूँगा।"—राजकुमार ने कहा।

"नागकुमारी को देखकर, तुम्हारा इरादा ज़रूर बदल जाएगा।"—राजा ने कहा। राजा ने मदालसा को बुलाने के लिए नाग-कन्याओं को भेजा। मदालसा आई। पति-पत्नी एक दूसरे को देखकर बहुत खुश हुये।

जो कुछ गुज़रा था, नागराज ने राजकुमार को कह सुनाया। "यह पहिले ज़रूर तुम्हारी पत्नी थी, पर अब यह मेरी लड़की है। तुम्हें अपना दामाद बनाने के लिए मैं तुम्हारा पुनः विवाह कर रहा हूँ।" नागराज ने कहा।

उन दोनों का, नागलोक में वैभव के साथ विवाह हुआ। नागराज ने ऋतुध्वज और मदालसा को मणि, सोना, आदि बहुमूल्य चीज़ें भेंट दीं। उनको मर्यादा के साथ उनके घर भेज दिया।

D.K. CHAVAN.
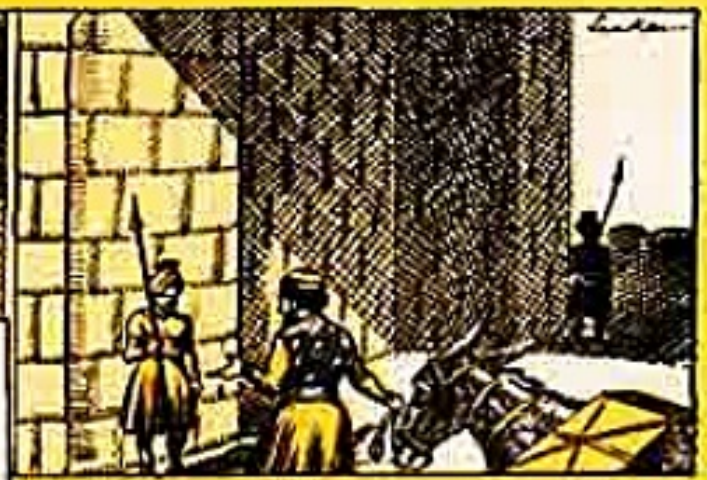
चालाक चित्रकार

बहुत समय पहिले, राजपुताने में जयसिंह नाम का एक राजा हुआ करता था। उसे चित्र लेखन का बड़ा शौक था। उसके दरबार में एक बड़ा चित्रकार रहा करता था। वह चित्रलेखन में बड़ा माहिर था। जयसिंह उससे अपना चित्र बनवाना ही चाहता था कि चित्रकार को कोई बीमारी हो गयी और वह अचानक मर गया। उस दिन से उस चित्रकार का आसन ख़ाली रहा।

एक बार हिमालय से हेमचन्द्र नाम का एक गरीब चित्रकार राजपुताना आया। हेमचन्द्र जान गया था कि जयसिंह के दरबार का चित्रकार मर गया था और उसकी जगह अभी तक नहीं भरी गई थी। यह सोचकर कि वह उस नौकरी को पा सकेगा, वह तीन दिन खच्चर पर, भूखा प्यासा, जंगल-पहाड़ों को पार करता हुआ, जयसिंह के पास आया था।

पहिले, राज-सैनिकों ने हेमचन्द्र को राजमहल में नहीं जाने दिया। "मैं चित्रकार हूँ। राजा को दिखाने के लिए चित्र लाया हूँ।" उसने कहा। तब उन्होंने उसे अन्दर जाने दिया। हेमचन्द्र ने राजा का दर्शन कर बड़े विनीत भाव से उससे कहा—"भूखा प्यासा, मैं कितनी ही दूर से आपको देखने आया हूँ। ये मेरे बनाये हुए चित्र हैं। आप इन्हें देखेंगे तो आपको मेरी कला के बारे में पता लग जाएगा।"

उन चित्रों को देखकर राजा बड़ा सन्तुष्ट हुआ। हेमचन्द्र सचमुच बड़ा चित्रकार था। जयसिंह यह न जान सका कि इतने बड़े चित्रकार को, भूखा प्यासा, इतनी दूर क्यों आना पड़ा।

श्रीमती उषा मेहरोत्रा

"मुझे ये चित्र बहुत पसन्द आये हैं। बताओ, इनका क्या दाम है?" जयसिंह ने हेमचन्द्र से पूछा।

"मुझे भूख लग रही है! पहिले मुझे भोजन दिल्वाइये। मुझे मालूम हुआ है कि चित्रकार का स्थान आपके दरबार में बहुत दिनों से ख़ाली है। अगर आपको कोई आपत्ति न हो तो वह स्थान मुझे दिल्वाइये! वह ही मेरे लिये बहुत कुछ है।" हेमचन्द्र ने कहा।

राजा मान गया। और उसको राज सैनिकों के साथ भोजनालय में भेज दिया। हेमचन्द्र ने पेट भर कर खाना खाया। उसके खच्चर को राजा के अस्तबल में बाँध दिया गया। अगले दिन से ही हेमचन्द्र जयसिंह के दरबार में, चित्रकार के आसन पर बैठने लगा।

क्योंकि फिर चित्रकार की नियुक्ति हो गई थी, जयसिंह ने अपना चित्र बनवाना चाहा। उसने हेमचन्द्र से कहा—"दरबार में हमारे पूर्वजों के चित्र हैं। मेरे चित्र बनाकर, अगली पीढ़ीवालों के लिए, मेरी शक्ल-सूरत देखने का अवसर दो।"

"आपका एक चित्र ही क्या, सिंहासन पर आपको और रानी को बिठाकर, आपके

मन्त्री, सामन्त, सेना नायक—सबके चित्र बना दूँगा। दरबार में मुझे एक अच्छी दीवार दिखाइये, बाकी सब मैं देख लूँगा।" हेमचन्द्र ने कहा।

राजा बड़ा खुश हुआ। राज सभा का चित्र बनाने की उसने उसको अनुमति दे दी। राज दरबार में कई बड़े बड़े तोन्दू थे, कई कुबड़े थे, कई काने थे, कई ऐंचे थे। उनमें से एक एक ने हेमचन्द्र के पास आकर कहा—"जब मेरा चित्र बनाओ तो मेरी झुकी पीठ न बनाना, मेरा चित्र ऐसा बनाओ जिसमें मेरी दोनों आँखें

हाँ, मेरी कानी आँख न बनाना।—हमारी बात न मानोगे तो तुम्हें खूब मारेंगे-पीटेंगे।" हेमचन्द्र को डराया धमकाया।

यह बात राजा को भी मालूम हुई। उसने हेमचन्द्र को बुलाकर कहा—"अगर तुमने जो जैसे हैं, वैसे उनको न बनाया, तो मैं तुम्हें फ़ाँसी पर चढ़वा दूँगा। याद रखना।"

हेमचन्द्र को ऐसा लगा, मानों सामने कुआँ हो और पीछे गढ़ा। चाहे कुछ करे उसको मौत सामने नज़र आयी। उसने बहुत देर तक सोच कर एक रास्ता ढूँढ निकाला।

चित्र बनाने के लिये एक दीवार निश्चित कर दी गई। एक परदा लगा कर, तीन सहायकों के साथ खूब खाता-पीता हेमचन्द्र मज़े में समय बिताने लगा।

एक महीना बीत गया। राजा ने हेमचन्द्र को बुलाकर पूछा कि चित्र कहाँ तक पूरा हो गया है।

"महाराज! मैं काम कर रहा हूँ। जल्दी ही पूरा हो जाएगा।" हेमचन्द्र ने कहा।

महाराज ने फिर कुछ दिनों बाद उससे चित्र के विषय में पूछा। तब

हेमचन्द्र ने जवाब दिया—"महाराज! बस अब थोड़ा-सा काम बाकी रह गया है।" हमेशा उसका यही जवाब रहता।

इस प्रकार तीन महीने बीत गये। मगर चित्र को पूरा न होता देख राजा को गुस्सा आ गया। उसने हेमचन्द्र से पूछा—"अगर एक सप्ताह में चित्र न पूरा हुआ तो मैं तुझे कड़ी सज़ा दूँगा।"

यह सुन हेमचन्द्र ने कहा—"चित्र पूरा हो गया है। कल अच्छा दिन है। अगर आप सपरिवार आयें तो चित्र का अनावरण किया जा सकता है।"

राजा ने सन्तुष्ट हो, यह ख़बर सब दरबारियों को सुनाई।

अगले दिन राजा, रानी और राज्य कर्मचारी चित्र देखने आये। दीवार पर तब भी परदा लगा हुआ था।

चित्र देखने के लिए आये हुए व्यक्तियों से हेमचन्द्र ने कहा—"आप सब का चित्र बनाया है। सब अपना अपना चित्र ध्यान से परखिये। परन्तु पहिले मैं एक बात अर्ज करना चाहता हूँ। आपमें से उन लोगों को ही चित्र दिखाई देगा, जो अच्छे घराने में पैदा

हुए हैं, दूसरों को नहीं दिखाई देगा।" उसने परदा हटा दिया।

दीवार पर एक भी चित्र न था। परन्तु किसी ने भी कुछ न कहा। राजा भी चुप रहा। सब के सब यह सोचने लगे कि सिवाय उसके सब को चित्र दिखाई दे रहा था।

राजा के विदूषक ने कहा—"जाने मेरा जन्म भी कहाँ हुआ है कि मुझे केवल खाली दीवार दिखाई दे रही है। उस पर कोई चित्र नहीं है।"

दूसरे भी एक एक करके कहने लगे—"हमें भी चित्र नहीं दिखाई दे रहा है।"

यह बात साफ़ हो गई कि हेमचन्द्र सब की आँखों में धूल झोंकना चाहता था। राजा ने दाँत कटकटाते हुए कहा—"नीच कहीं का! इतने लोगों को धोखा दिया है! तुझे फ़ाँसी दे दी जाये तो भी कोई पाप नही है।"

हेमचन्द्र ने सविनय हाथ जोड़कर कहा—"ठीक है हुज़ूर! मुझे फ़ाँसी पर चढ़ा दीजिये। मैंने कभी कल्पना भी न की थी कि मैं इतने दिन जीवित रहूँगा। परन्तु मेहरबानी करके मुझे सोने की रस्सी से फ़ाँसी दिलवाइये। क्योंकि लक्ष्मी की मुझ पर क़तई कृपा नहीं है। फ़ाँसी देते समय हो सकता है कि सोने की रस्सी ही टूट जाये।"

यह सुनते ही राजा का गुस्सा काफ़ूर हो गया। वह हँसने लगा। हेमचन्द्र भले ही बड़ा चित्रकार हो, पर वह दरबार में रहने लायक नहीं था, यह बात साफ़ हो गई थी। फिर भी हेमचन्द्र को राजा ने कुछ सोना दिया। हेमचन्द्र जिस खच्चर पर आया था, उसी पर चला गया।

भोला-भाला भेंडिया

एक दिन एक भेड़िया गंगा के आसपास शिकार की तलाश में घूम रहा था। इतने में नदी में बाढ़ आ गई। बाढ़ के पानी ने उसे एक पत्थर पर धकेल दिया। वह बाढ़ के पानी से बाहर न निकल सकता था, न खाने को ही कुछ खोज सकता था।

"अरे मैं भी क्या मूर्ख!" भेड़िया ने यह याद करके कि उस दिन एकादशी का था, सोचा—"आज मैंने व्रत रखा तो सीधे स्वर्ग जाऊँगा। मैं खाने की क्यों सोच रहा था!"

इस बीच एक बकरा तैरता आया। वह भी उस पत्थर पर चढ़ गया, जिस पर भेड़िया था। "आज मेरी आँखों के सामने खाना पड़ा है। मैं अब भूखा हूँ। अगले एकादशी के दिन स्वर्ग जाने के लिए उपवास रख लूँगा।" भेड़िये ने सोचा। वह बकरे पर लपका, पर बकरा पानी में कूदकर तैर गया।

"मैं भी कितना भाग्यशाली हूँ कि मैंने अपना व्रत भंग न किया। नहीं तो क़रीब क़रीब मैं स्वर्ग चूक गया होता।" भेड़िये ने सोचा।

पारस

विक्रमार्क ने अपना हठ न छोड़ा। पेड़ के पास फिर गया। शव को कन्धे पर डालकर चुपचाप श्मशान की ओर चला। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा! तुम इस आधी रात में बहुत मेहनत कर रहे हो। तुम्हारा मन बहलाने के लिये एक कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यह कहानी सुनाई :

एक ज़माने में मराल देश का राजा सुकेतु था। वह बहुत पराक्रमी था, पर धनी नहीं था। उस देश में बारह वर्ष तक अकाल रहा, इसलिये वह बहुत गरीब हो गया। इस कारण सुकेतु अपने राज्य का विस्तार न कर सका। अकाल के कारण कई मर गये। कई दूर देश चले गये।

बेताल कथाएँ

उस समय मराल देश में एक सुनार आया। वह बहुत बूढ़ा था। उसका नाम विश्वकर्मा था।

विश्वकर्मा ने सुकेतु के दर्शन करके कहा—"महाराज! मैं कई दिनों से सोना बनाने की विद्या सीखने की कोशिश कर रहा हूँ। आपने एक साल का समय मुझे दिया तो मैं बहुत-सा सोना तैयार कर सकूँगा। तब तक कृपया आप मेरा पालन-पोषण का भार लीजिये।"

महाराजा सुकेतु ने सोचा कि अगर विश्वकर्मा की सहायता से बहुत-सा सोना बन सका, तो उसके और उसके देश के बुरे दिन लद जायेंगे। "अच्छा! तुम एक साल तक राज महल में ही रहो। तुम्हारे लिये मैं सब प्रबन्ध कर दूँगा। फिर जो सोना तुम बनाओगे, उसमें से पाँच सेर तुम रख लेना और बाकी मुझे दे देना होगा" सुकेतु ने विश्वकर्मा से कहा।

विश्वकर्मा मान गया। उसके लिए एक कारखाना बनाया गया जिसमें तेजाब, मर्तबान, आदि, रखे गये। तरह तरह के लोहे दिये गये। वह वहाँ बैठा रात दिन काम करता रहता।
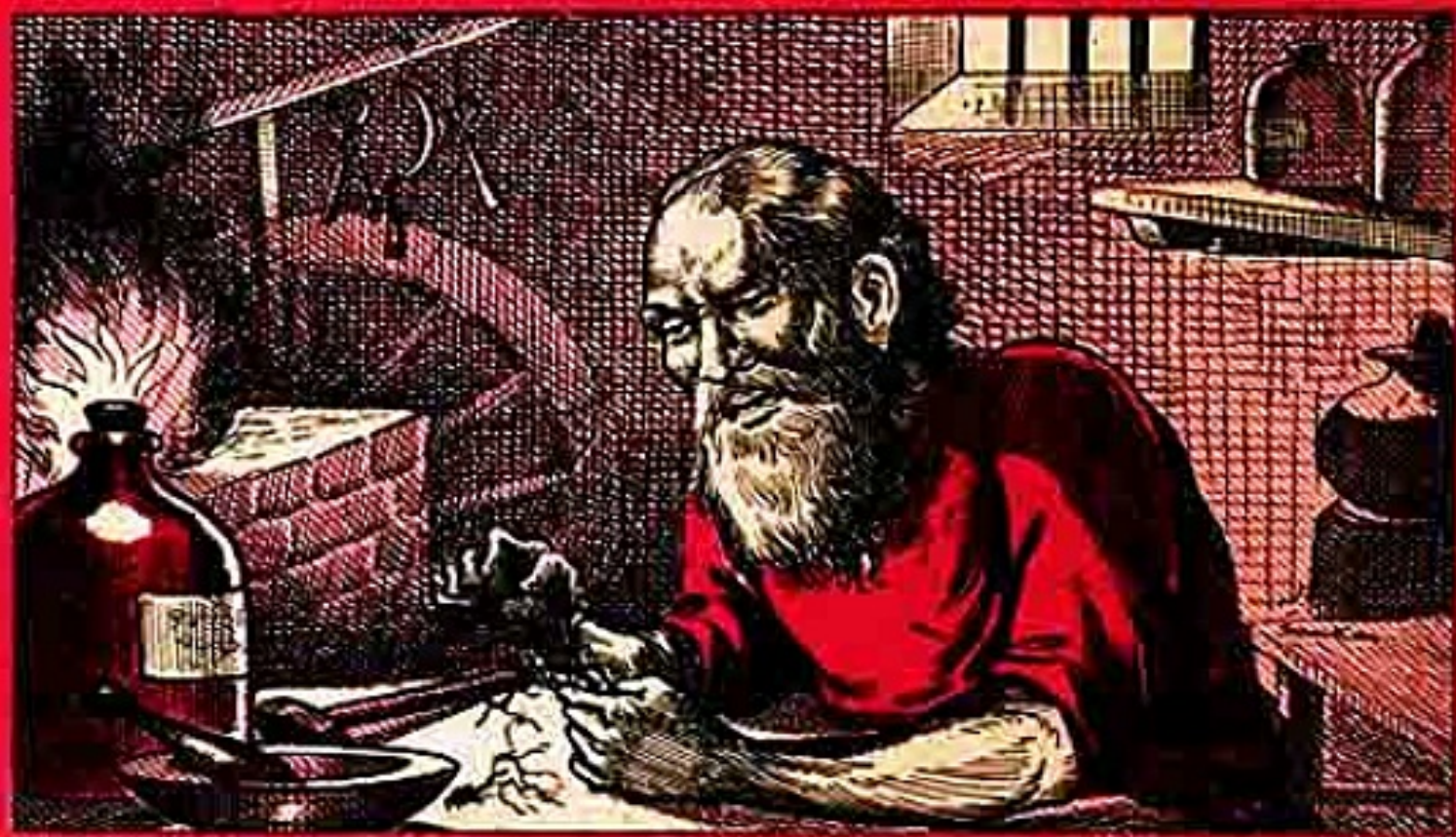
"तुमने झूट कहा कि एक साल में सोना बनाकर दे दोगे। अगर तुमने छः महीने में सोना बनाकर न दिया तो ख़बरदार, तुम्हारा सिर कटवा कर क़िले पर लटकवा सकता हूँ। तुम पर मैं बहुत भरोसा किये हुए हूँ। देश में अगर गरीबी ख़तम हो गई तो सेना इकट्ठी करके आसपास के राज्यों को जीतकर मैं सम्राट होना चाहता हूँ। तुमने मेरी अशाओं पर पानी फेर दिया है। तो भी मैं तुम्हें इस बार माफ़ करता हूँ। अगली बार क्षमा नहीं करूँगा" सुकेतु महाराजा ने कहा।

सप्ताह और महीने बीत गये। जो कुछ जब कभी वह माँगता राजा देता। समय सुख से कटता जाता था। देखते देखते एक साल पूरा हो गया। राजा ने विश्वकर्मा को बुलाकर पूछा--"कहाँ है तुम्हारा पारस का पत्थर?"

"महाराज! अभी परीक्षण ख़तम नहीं हुए हैं! ख़तम होने जा रहे हैं। अगर अपने छः महीने की और मोहलत दी तो आपको मैं मन चाहा सोना बनाकर दे दूँगा।" विश्वकर्मा ने कहा।

राजा को बड़ा गुस्सा आया।

विश्वकर्मा को समझ में न आया कि क्या करे। वह सोना बनाना नहीं जानता था। सोना बनाने की कोशिश करते करते वह बूढ़ा हो गया था। पेट भरता न था, इसलिये झूट बोल बोल कर, गुज़ारा करता था।

यह सोचकर कि एक साल के ख़तम होते होते वह ज़रूर मर जायेगा, इसलिये ही उसने राजा से एक वर्ष की अवधि माँगी थी। परन्तु मौत न आई। विश्वकर्मा मजबूरन मरना नहीं चाहता था। अब उसे
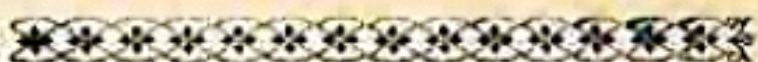
छः महीने का और समय मिल गया था। परन्तु छः महीने बाद क्या होगा, वह बूढ़ा समझ नहीं पाता था।

विश्वकर्मा ने भागना चाहा। परन्तु वह भाग न सका। राजा के हुक्म पर, उस पर रात-दिन सिपाहियों का पहरा रहता। राजा की बातें उसके कानों में गूंज रही थीं। वह जान गया कि उसका सिर कटवा दिया जाएगा।

छः महीने बीत गये। राजा ने विश्वकर्मा को बुलाकर पूछा—"क्या किया?"

"महाराज! सोना बनाना मेरे भाग्य में नहीं लिखा है। अगर भगवान ने मुझे एक हज़ार वर्ष भी जीने को दिये, तब भी मैं सोना न बना पाऊँगा।" विश्वकर्मा ने निर्भय होकर कहा।

"इसके लिये मैं तुम्हें क्या सज़ा दूँगा, यह तो तुम जानते ही होगे।" सुकेतु ने गुस्से में कहा।

"मुझे सज़ा देने की आपको ज़रूरत नहीं है। मैंने सोने से भी बढ़कर एक अच्छी चीज़ ढूँढ़ निकाली है।" विश्वकर्मा ने कहा।

"क्या है वह?" राजा ने पूछा।

"चान्दी! वह मामूली चान्दी नहीं है। कई जड़ी-बूटियों से साफ़ की हुई चान्दी है।"

"उससे मेरा क्या फ़ायदा है?" राजा ने पूछा।

"महाराज! उस चान्दी से मैं आपकी तलवार का मूठा बनाऊँगा। अगर आपने वह तलवार हाथ में ली तो बड़े से बड़ा शत्रु भी उसका शिकार हो जाएगा। आप जितना सोना चाहते हैं, उतना वह तलवार ही आपको कमाकर दे देगी। मेरा विश्वास कीजिए।" विश्वकर्मा ने कहा।

"तुम क्या मुझे फिर धोखा दे रहे हो?" राजा ने पूछा। "महाराज! मैं आपको धोखा देकर कहाँ जाऊँगा! जब आपको यह पता लगे कि मेरे बनाये हुए तल्वार में वह प्रभाव नहीं है, तभी मेरा सिर कटवा देना।" विश्वकर्मा ने कहा।

राजा मान गया। विश्वकर्मा ने राजा की तल्वार मँगाकर, उसके मूठे पर, उसने चान्दी की परत मढ़ दी। राजा ने उस तल्वार का जलूस निकल्वाया। उसकी पूजा आदि, करवायी। विश्वकर्मा को एक जागीर इनाम में दी।

यह ख़बर चारों ओर फैल गई। आस-पास के राजा घबराने लगे। कई ने उस ख़बर का विश्वास नहीं किया "उस विश्वकर्मा ने सुकेतु महाराज की आँखों में धूल झोंक दी है।" कई ने कहा।

जल्दी ही अपनी थोड़ी बहुत सेना इकट्ठी करके, सुकेतु ने पड़ोस के राज्य पर हमला किया। पड़ोस का राजा मन्त्रियों से सलाह-मशवरा करने लगा।

"महाराज! सुकेतु अपने तल्वार के बूते पर, थोड़ी सेना लेकर हम पर हमला कर रहा है। हमें डरने की कोई ज़रूरत
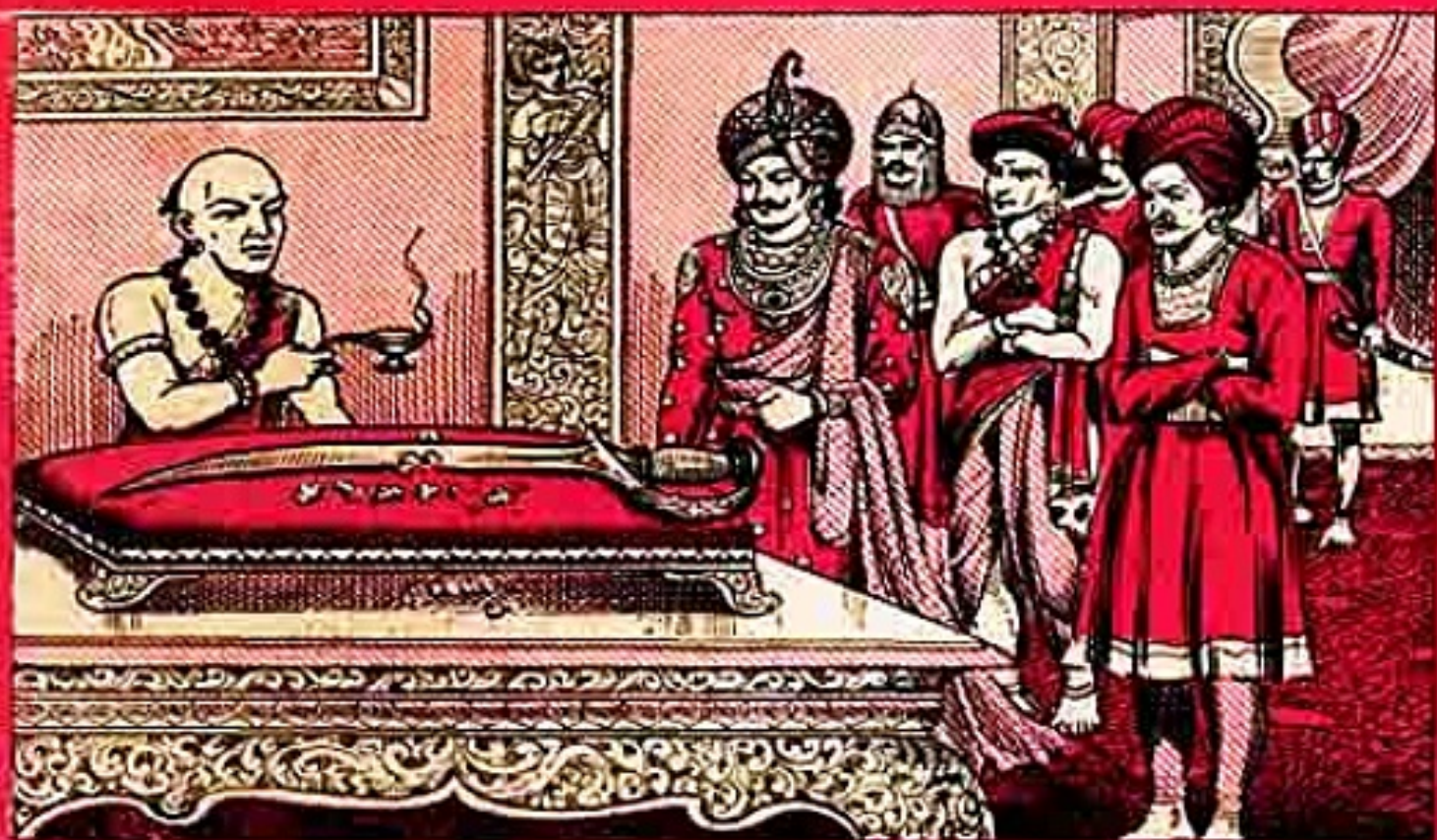
नहीं है। हमें युद्ध के लिये तैयार रहना चाहिये।" कई मंत्रियों ने सलाह दी।

"उस तल्वार में कोई महिमा है, नहीं तो क्या वह इतनी थोड़ी सेना लेकर हम पर हमला करेगा? सुकेतु उतना पागल नहीं है। सब कह रहे हैं कि वह तल्वार शत्रु का गला काटकर ही रहेगी। इसलिये सुकेतु राजा से संधि कर लीजिये।" कई और ने कहा।

पड़ोस का राजा डर गया। वह दूतों को लेकर सुकेतु की छावनी पर गया। सुकेतु अपने हाथ में तल्वार लेकर बैठा था। पड़ोस के राजा को उस तल्वार में, मानों यम देवता दिखाई दिया। वह बिना हिचकिचाये सुकेतु का सामन्त होने के लिए मान गया।

इसके बाद सुकेतु की कहीं भी पराजय न हुई। कई राजाओं ने ज़िद करके सुकेतु से युद्ध किया। परन्तु सुकेतु का तल्वार उठाना था कि सेना इधर उधर तितर बितर होकर, मैदान छोड़कर भाग जाती। बहादुर सुकेतु और राजा की मुठभेड़ होती और राजा मारा जाता।
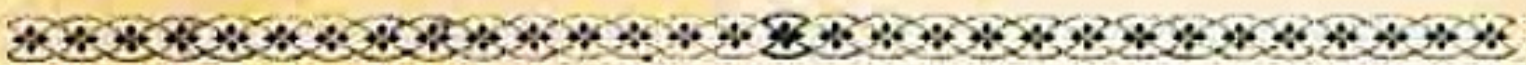
इस प्रकार दो तीन राजाओं के मारे जाने पर दूतों के भेजने पर, और राजा आकर उसका आधिपत्य स्वीकार कर लेते। सुकेतु सम्राट हो गया। मराल देश का दारिद्र्य दूर हो गया। विश्वकर्मा का नाम हमेशा के लिए अमर हो गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा—"राजा! विश्वकर्मा जो सालों की कोशिश के बाद भी सोना न बना सका था, वह कैसे इस महिमापूर्ण चान्दी को छः महीने में बना सका? जब वह चान्दी बना सकता था तो वह क्यों झूट बोल बोलकर ज़िन्दगी बसर करता आया था? अगर तुमने जान बूझकर इस प्रश्न का उत्तर न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जाएगा।"

"विश्वकर्मा की बनाई हुई चान्दी में कोई महिमा न थी। सब महिमाएँ विश्वास करनेवालों के मन में होती हैं। यह विश्वास करके ही कि उस तल्वार में कुछ महिमा है, सुकेतु युद्ध के लिए निकला था। उस प्रकार का विश्वास पड़ोस के राजाओं में भी था। इसलिये बिना युद्ध के, सुकेतु के सामने उन्होंने घुटने टेक दिये। ज्यों ज्यों विश्वास करनेवालों की संख्या बढ़ती गई, त्यों त्यों तल्वार की महिमा भी बढ़ती गई। चीज़ों को बनाने की अपेक्षा महिमा बनाना आसान है। यह बात बिना जाने विश्वकर्मा झूट बोलकर पेट भरा करता था। जब सिर पर मौत आई तब उसे यह भेद पता लगा। यही पारस पत्थर उसने बुढ़ापे में पैदा किया।"

इस प्रकार राजा का मौन भंग होते ही, बेताल शव के साथ, फिर जाकर पेड़ पर बैठ गया। (कल्पित)
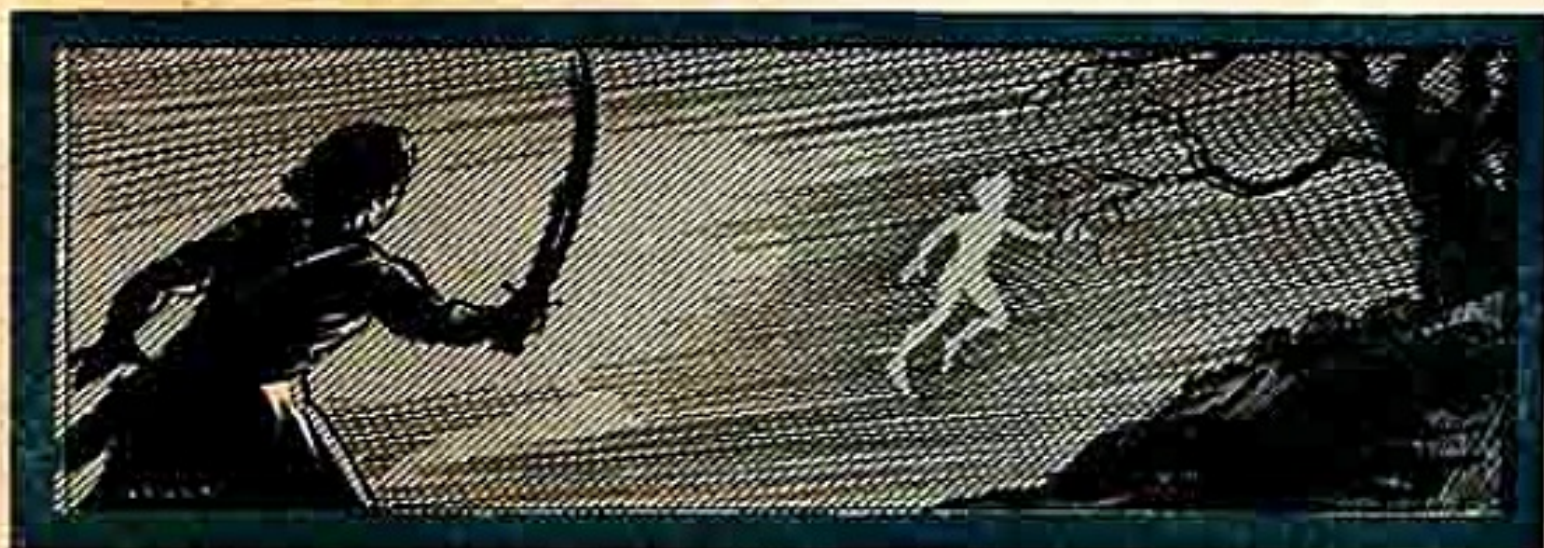
विदूषक का जवाब

एक राजा के यहाँ एक विदूषक था। वह राजा का दिल बहलाकर बहुत से इनाम पा चुका था। राजा उसे बहुत पसन्द करते थे।

एक दिन, जाने क्यों राजा को विदूषक पर बहुत गुस्सा आया। राजा ने गुस्से में आज्ञा दी कि उसका सिर काट दिया जाय!

विदूषक ने राजा के चरणों पर पड़कर क्षमा माँगी।

"जो अपराध तूने किया है, उसके लिए मरण-दण्ड जरूरी है। परन्तु चूँकि तूने मेरा बहुत दिन से मनबहलाव किया है, इसलिये तुझे एक रियायत देता हूँ। वह यह कि तू जिस तरह मरना चाहता है, वह मुझे कल तक आकर बता दे। "राजा ने कहा।

अगले दिन विदूषक ने राजा के पास जाकर कहा—"मैंने निश्चय कर लिया है कि मैं किस तरह मरना चाहता हूँ। मुझे कृपया उस तरह मरने दीजिये।"

"हाँ हाँ! मैं उसके लिए तैयार हूँ। बताओ, कैसे मरना चाहते हो?" राजा ने पूछा। "राजन्! मैं बुढ़ापे में चारपाई पर पड़े मरना चाहता हूँ।" विदूषक ने कहा।

राजा भी क्या करता? उसने विदूषक को छोड़ दिया।

नाविक सिन्दबाद

कई दिनों तक मेरा जीवन आराम से कटता रहा। मैं और मेरी पत्नी बड़े प्रेम से रहा करते। इसलिये मैंने बग़दाद, जब चुपचाप जाने की ठानी तो पत्नी को भी साथ ले जाने की सोची। आदमी कुछ सोचता है, और भगवान कुछ और—यह बात कभी झूट नहीं निकलती। यह बात कि मैं दिन के सपने देख रहा था, जल्दी ही स्पष्ट हो गई।

एक दिन पड़ोस के घर में, एक की स्त्री गुज़र गई। मैं उससे मिलने गया। मैंने कहा—"दुख मत कीजिये। दुःख से हम कुछ नहीं कर सकते। यह वियोग आप जल्दी ही भूल जायेंगे। कौन जाने कि आपको इससे भी अच्छी पत्नी मिले।"

यह बात सुनकर उसे कुछ अचरज हुआ। "थोड़ी देर में मरनेवाले के लिये दूसरी पत्नी की क्या ज़रूरत?" उसने कहा।

इस बार आश्चर्य करने की मेरी बारी थी। "आप क्यों ऐसा कह रहे हैं? क्यों फ़ालतू निराश

चौथी समुद्र-यात्रा

होते हैं? अल्लाह की मेहरबानी से आपकी सेहत में कोई ख़राबी नहीं है। कहीं आप आत्म-हत्या करने की तो नहीं सोच रहे हैं?"

"आप शायद हमारे देश के रीति-रिवाज़ नहीं जानते हैं? हमारे देश में चाहे पति मरे या पत्नी, शव के साथ दोनों को ही दफ़ना देते हैं। इस रीति का सबको पालन करना होता है। राजा को भी।"

"छी छी! यह क्या रीति है? जब तक मुझ में प्राण है, मैं इस रीति का कभी पालन न करूँगा।" मैंने कहा।

हम बातें कर ही रहे थे कि उसके सम्बन्धी आये। उसकी पत्नी के मरने पर, और उसको मरने की तैय्यारी करते देख, वे रोने-धोने लगे। फिर अन्त्येष्टि की विधि पूरी की जाने लगी। शव को क़ीमती कपड़े पहिना कर, गहनों से सुशोभित कर वे श्मशान की ओर चले। शव के पीछे पति चल रहा था। उसके बाद उसके सम्बन्धी चल रहे थे।

सब नदी किनारे के एक पहाड़ पर गये। वहाँ पर एक गहरा कुआँ-सा था। उस पर एक बड़ा पत्थर ढ़का हुआ था। उसको एक तरफ़ हटाकर शव को उसमें उतारा।
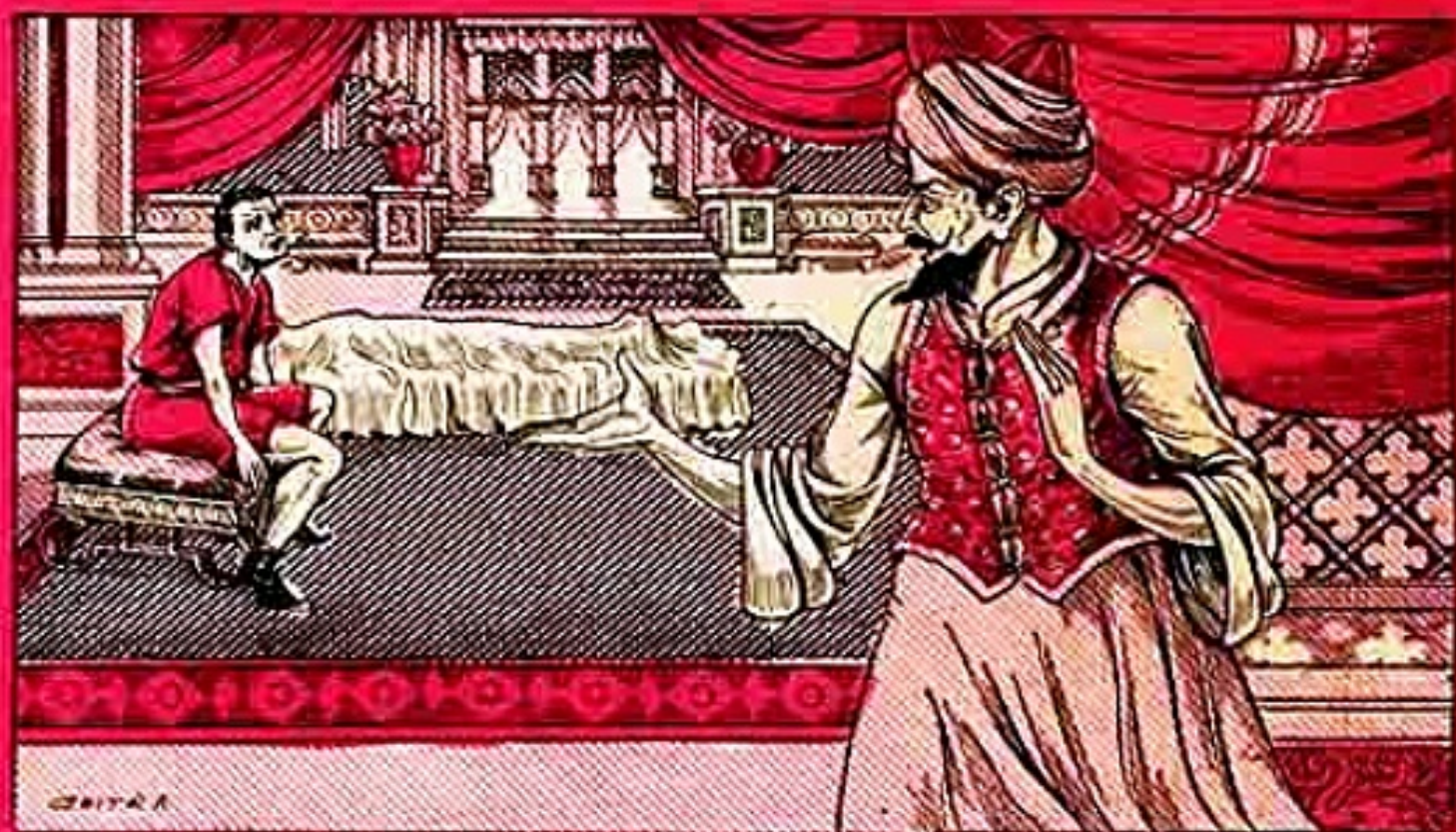
उसके बाद मेरे मित्र को रस्सियों से बाँधकर उसमें उतारा गया। उस रस्सी में एक सुराही पानी की और सात रोटियाँ बाँधी गईं। मेरे मित्र ने नीचे उतरने के लिए कुछ भी आना-कानी नहीं की। फिर कुएँ पर पत्थर ढाँप दिया गया। हम सब वापिस चले आये।

मैंने भी इस भयंकर विधि में भाग लिया था। मुझे बड़ा दुख हो रहा था। इतनी भयंकर रीति मैंने कहीं और न देखी थी। राजमहल में जाकर मैंने राजा को देखते ही कहा—"हुज़ूर! मैंने बहुत से देश देखे हैं, परन्तु मृत पत्नी के साथ जीवित पति का दफ़नाया जाना मैंने कहीं नहीं देखा है। इस रीति का पालन क्या परदेशियों को भी करना पड़ता है? कृपा करके यह बताइये।"

"ज़रूर पालन करना पड़ता है। अगर पत्नी मर गई, तो यहाँ रहनेवाले परदेशियों को भी उसके साथ मरना होगा।" राजा ने कहा।

मुझे ऐसा लगा जैसे कोई मेरे पेट में हाथ डालकर, मथ रहा हो। दिल की धड़कन तेज़ हो गई। मैं घबराता घबराता घर गया। कहीं ऐसा न हो कि मेरी अनुपस्थिति में मेरी पत्नी मर गई हो। उसको सुरक्षित देख मुझे कुछ ढाढ़स हुआ। "डरो मत सिन्दबाद! तुम ही पहिले मरोगे! जीते जी तुम्हें नहीं दफ़ना देंगे।" मैंने अपने आपको आश्वासन दिया। परन्तु यह आश्वासन झूठा साबित हुआ। क्योंकि इसके कुछ दिनों बाद मेरी पत्नी को बीमारी हुई। वह थोड़े दिन चारपाई पर पड़ी रही। फिर मर गई।

मेरे दुख और भय की सीमा न थी। जीते जी दबाये जाने से बचा या

नरभक्षकों के हाथ खाये जाने से क्या! जब राजा ने आकर मेरी मृत्यु के बारे में शोक व्यक्त किया, तो मेरी रही सही आशा भी जाती रही। राजा को मुझसे बड़ा लगाव था। उन्होंने कहा कि जब मुझे समाधि में रखा जायेगा, तब वे दरबारियों सहित उपस्थित होंगे। सर्वाभूषणों से सुशोभित कर, जब मेरी पत्नी को बक्स में रख कर ले जाया जाने लगा, तो मैं उसके पीछे चला, और मेरे पीछे राजा चल रहे थे।

नदी के किनारे वाले पहाड़ पर गये। कुएँ पर रखा पत्थर अलग रखा गया। मेरी पत्नी के शव को नीचे उतारा गया। वे सब जो मुझसे विदा लेने आये थे। मेरे चारों ओर परिक्रमा करने लगे। तब मैंने राजा से कहा—"मुझे इस देश की रीति का शिकार बनाना उचित नहीं है। मेरे देश में मेरी पत्नी है, बाल-बच्चे हैं। वे मेरी इन्तज़ार कर रहे होंगे।"

मेरी बात किसी ने न सुनी। मेरे हाथों में रस्सी बाँध दी गई। उसी रस्सी में पानी की सुराई, और सात रोटियाँ बाँध दी गईं। मुझे नीचे उतारा गया। "रस्सियों को छोड़ दो। हम ऊपर खींच लेंगे" वे ऊपर से चिल्लाये। मैंने रस्सी नहीं छोड़ी, बल्कि इशारा किया कि वे मुझे ऊपर खींच लें। उन्होंने ऊब कर रस्सी छोड़ दी और कुएँ पर पत्थर रखकर वे चले गये।

अन्दर एक बड़ी गुफा-सी थी। शवों के कारण सब जगह बदबू आ रही थी। क्योंकि ऊपर से थोड़ी बहुत रोशनी आ रही थी, इसलिये वहाँ घना अन्धकार न था। मैं ज़मीन पर गिर गया। बहुत देर तक दुखी पड़ा रहा। "आराम से घर में रह रहा था। छोड़कर आया हूँ! इसलिये मेरी स्थिति यह ही होनी चाहिये। जब

वह जहाज डूबा था, समुद्र में ही क्यों न डूब करा? कम से कम नर-भक्षकों का भोजन जो बन गया होता! मैं इस मनहूस देश में क्यों आया? इस तरह की बुरी मौत क्यों मरी जाये?" मैं सोचता रहा।

थोड़ी देर बाद भूख सताने लगी। मैं ज़िन्दा रहने की कोशिश में था, इसलिए थोड़ी थोड़ी रोटी और पानी पीने लगा। रात में सोने के लिए एक छोटी-सी जगह साफ़ कर ली। धीमे धीमे मेरी रोटी, और पानी ख़तम होने लगे। अब सिवाय मृत्यु की प्रतीक्षा के मैं और कुछ न कर सकता था। उस हालत में मुझे कुछ आहट सुनाई पड़ी। मेरी नींद टूट गई। सावधानी से सुना तो किसी के साँस लेने की आवाज़ आ रही थी। बाद में किसी जानवर के भागने की ध्वनि सुनाई पड़ी। मैं हिम्मत करके उस भागते हुए जानवर के पीछे भागा। बहुत दूर, ऊपर नीचे भागता भागता गया तो सामने एक ही एक तारा चमचमाता दिखाई दिया।

मेरे आश्चर्य की सीमा न रही। वह गुफ़ा में एक और कुआँ हो सकता है, उसमें से भी शव फेंके जाते होंगे—मैंने

सोचा। पास जाकर देखा तो वह एक खोह की तरह थी। शवों को खाने के लिए भेड़िये वग़ैरह उस जगह का उपयोग करते होंगे। उसमें घुस कर जब मैं ऊपर आया तो आकाश में तारे चमक रहे थे। निर्मल वायु चल रही थी। मेरे सामने समुद्र था और पीछे पहाड़।

वहाँ घुटने टेक कर मैंने भगवान को अपनी कृतज्ञता प्रकट की। वहाँ मुझे कोई भय न था। नगरवाले उस तरफ़ न आते थे। मैं फिर उसी रास्ते गया और शवों को पहिनाये गये सब गहने जमाकर लाया। और समुद्र के किनारे, पहाड़ की तलहटी में उनको होशियारी से मैंने रखा। मैंने बहुत सा चान्दी-सोना इस तरह जमा कर लिया।

जो कुछ मिलता खाता, वहाँ समुद्र के किनारे पड़ा रहता। एक दिन मुझे एक नाव दिखाई दी। मैंने अपनी पगड़ी उतारी और उसको हवा में फहराने लगा। सौभाग्य से नाववालों ने मुझे देख लिया। नाव को किनारे पर लाये। मुझे और मेरी गठ्ठरों को नाव पर चढ़ा लिया। नाव के कप्तान ने मेरे पास आकर कहा—"क्यों

भाई ! मैं कितने ही दिनों से इस इलाके में नाव चलाता आया हूँ। पर यहाँ कभी कोई आदमी नहीं दिखाई दिया। तुम यहाँ कैसे आये ?"

"क्या करूँ हुज़ूर ! हम एक बड़ी नाव में सफ़र कर रहे थे कि तूफ़ान आया और नाव के टुकड़े टुकड़े हो गये। मैं ही एक ज़िन्दा रहा। मुझे एक बड़ा तख़्ता मिला। उसी पर अपना माल लादकर यहाँ आ पड़ा।" मैंने कहा। अगर मैं यह कहता कि मेरी शादी हो गई है और मेरी पत्नी के मर जाने पर मुझे भी दफ़ना दिया गया था, तो शायद उस नाव पर उस देश का कोई आदमी होता, और सुन लेता तो आफ़त आ जाती। इसलिए मैंने झूट कह दिया।

कप्तान से दोस्ती करने के लिए, मैंने एक सुन्दर गहने को गठ्ठर में से निकाल कर उसे देना चाहा। परन्तु उसने लेने से इनकार कर दिया। और कहा—"यात्रियों से हम पैसा लेते हैं। पर जिस की जान बचाते हैं, उनसे पैसे नहीं लेते। कितनों ही को मैंने स्वयं भोजन कपड़े, राह-खर्च दिया है। दूसरों के प्रति मनुष्य की तरह व्यवहार करना मानवता का धर्म है।"

उसकी ईमानदारी देखकर मुझे बड़ा सन्तोष हुआ। सफ़र बड़े आराम से कटा। मैं घंटों फ़ुरसत से पड़ा रहता और अपने अनुभवों को याद करता। सब कष्ट मुझे सपनों की तरह लगते। पर जब मुझे उस गुफ़ा की याद आती तो रोंगटे खड़े हो जाते।

जैसे तैसे हमारी नाव बसरा पहुँची। वहाँ कुछ दिन ठहरकर, बग़दाद पहुँचा। मुझे और मेरे लाये हुए माल को देखकर बन्धु-मित्र बहुत खुश हुए और उन्होंने मेरे सम्मान में कई दावतें दीं।
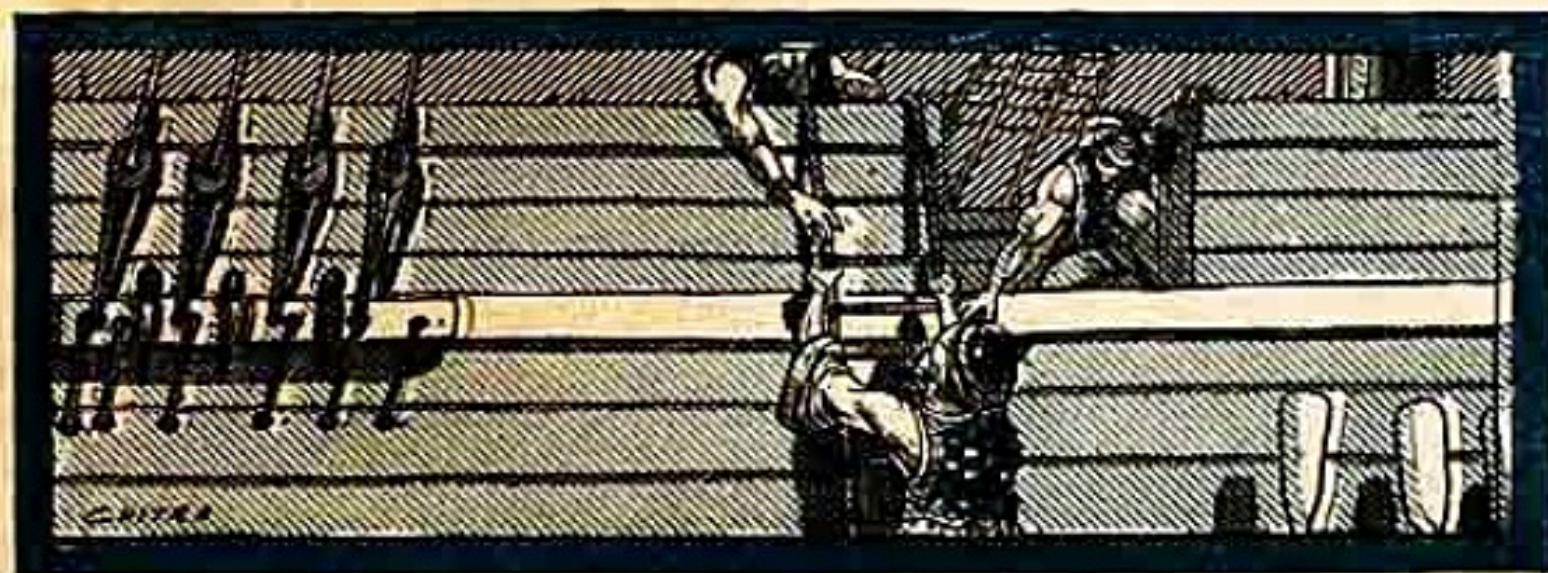
[५]

[जब मोहन भुवन-सुन्दरी को उठा ले गया तो ग्रीकों ने ट्रोय पर चढ़ाई की। पहले दिन के युद्ध में ट्रोजनों को हार खानी पड़ी। उसके बाद ग्रीक ट्रोय नगर पर कब्जा करके आसपास के प्रदेशों को लूटने लगे। दोनों पक्षों में यह लूट-खसोट नौ वर्ष तक चलती रही! इन नौ वर्षों में युद्ध के बजाय ग्रीक के शिबिरों में कई घटनायें हुयीं।]

ग्रीक लोगों के ट्रोय नगर को घेरे नौ वर्ष पूरे हो रहे थे। सरदियाँ आ गईं। सरदियों में युद्ध नहीं होता था। इसलिये उन दिनों ग्रीक अपनी छावनी बढ़ाते, और बाण विद्या का अभ्यास किया करते। युद्ध हो या न हो, युद्ध की तैयारियाँ हमेशा होती रहतीं।

युद्धभूमि से कुछ दूर सूर्य भगवान का एक मन्दिर था। वह तटस्थ प्रदेश था। उस मन्दिर में बलि देने के लिये ग्रीक और ट्रोजन दोनों जाया करते। ट्रोय नगर के प्रमुख पुरुष कभी कभी ग्रीक लोगों को उसी मन्दिर में दिखाई दिया करते थे। ट्रोय नगर वासी भी ग्रीक नेताओं को कभी कभी वहाँ देखा करते थे।

एक दिन वज्रकाय उस मन्दिर में बलि देने के लिये आया। वहाँ उसको वर्धन की पत्नी और लड़की दिखाई दी।

वे भी बलि देने आये थे। वर्धन की लड़की प्रमोदिनी बड़ी सुन्दर थी। उसको देखते ही वज्रकाय उससे प्रेम करने लगा। उसके लिए उसको देखे बग़ैर रहना मुश्किल हो गया। छावनी में वापिस जाते ही उसने एक दूत को बीरसिंह के पास भेजा। "वज्रकाय तुम्हारी बहिन प्रमोदिनी से विवाह करना चाहता है"—दूत ने वज्रकाय से कहा।

"तुम ग्रीक छावनी को छोड़कर अगर मेरे पिता वर्धन से आ मिले तो तुम मेरी बहिन से विवाह कर सकते हो। अगर तुम यह न कर सके, तो कम से कम यह वचन दो कि भूधव आदि वीरों की हत्या करवा दोगे।" बीरसिंह ने वज्रकाय के पास कहलाकर भेजा। ये उसकी शर्तें थीं।

वज्रकाय ने इन शर्तों के मानने में आना-कानी की। वह ग्रीक सेना का प्रमुख नेता जो था।

इस बीच सरदियाँ ख़तम हो गईं और वसन्त शुरू हो गया। युद्ध भी फिर शुरू हुआ। मैदान में बीरसिंह से मुक़ाबला करने के लिए वज्रकाय ने बहुत प्रयत्न किया। पर उसके प्रयत्न सफल न हुए। वह बीरसिंह के पास जा ही रहा था कि उसके भाई ने बाण मारकर, उसका हाथ यकायक घायल कर दिया।

युद्ध के रुख से ऐसा लगता था, जैसे देवता उनके प्रतिकूल हों।

वज्रकाय ने जब ट्रोय नगर के आसपास के राजाओं को जीता था, उन दिनों की प्रथा के अनुसार तब कई स्त्रियाँ उसकी गुलाम हो गई थीं। इनमें हेमा नाम की, भामिनी नाम की दो लड़कियाँ भी थीं। ग्रीक वीर जब इन गुलामों को आपस में

बाँटने लगे तो हेमा, राजा के हिस्से में आई, और भामिनी वज्रकाय के हिस्से में।

इनमें हेमा के पिता का नाम हेमाम्बर था। वह सूर्योपासक था। भक्त था। अपनी लड़की को ग्रीक के हाथों से छुड़ाने के लिए, उसने राजा के पास बहुत-से उपहार भेजकर, हेमा को छोड़ने की सविनय प्रार्थना की।

परन्तु राजा ने न उसके उपहार स्वीकार किये, न उसकी प्रार्थना ही मानी। हेमाम्बर को डाँट-डपटकर उसने भेज दिया। इस घटना के बाद, ग्रीक शिविर पर, कहीं से बाण गिरते, और सैकड़ों सैनिक रोज़ मारे जाते। ग्रीक सैनिकों में हाहाकार मच गया।

इस तरह दस दिन तक बाण गिरते रहे। तब ग्रीक नौकाओं के मार्ग-दर्शक कौशक ने कहा—

"हेमाम्बर सूर्योपासक था। वह सूर्य का प्यारा था। वह अपनी लड़की को छुड़वाने के लिए आया, और राजा ने डाँट-डपटकर उसे भेज दिया। हेमाम्बर ने सूर्य भगवान से प्रार्थना की और सूर्य भगवान ही हम पर इस प्रकार बाण छोड़कर हमें सजा दे रहे हैं। अगर हम इस ख़तरे से बचना चाहते हैं तो हमें तुरत हेमा को छोड़ देना चाहिये। और कोई रास्ता नहीं है।"—कौशक ने कहा।

राजा को इस बात पर विश्वास हो गया। हेमा को तुरत उसने हेमाम्बर के पास भेज दिया। वज्रकाय के हिस्से की भामिनी को उसने फ़ौरन अपने यहाँ बुलवा भेजा।

यह देख वज्रकाय को बहुत गुस्सा आया। "अब से मेरा इस युद्ध से कोई

वास्ता नहीं है। मैं अब इस युद्ध में भाग न लूँगा।" उसने निश्चय किया। वह पहिले ही प्रमोदिनी से प्रेम करने लगा था। उसके पिता वर्धन को सन्तुष्ट करने के लिए वज्रकाय को यह अच्छा मौका मिला। वज्रकाय के साथ उसकी सेनायें भी मैदान छोड़कर जाने लगीं। ग्रीक सेना में खलबली मच गई।

जब ट्रोजनों को मालूम हुआ कि वज्रकाय ने ग्रीक लोगों की तरफ़ से युद्ध न करने की शपथ ली है, तो वे बहुत खुश हुए। उन्होंने बड़े ज़ोर-शोर से ग्रीक लोगों पर हमला किया। उनका हमला देखकर राजा का दिल टुकड़े टुकड़े हो गया। वह बुरी तरह घबरा गया। सन्धि के लिए उसने ट्रोजनों के पास ख़बर भिजवाई।

युद्ध रोक दिया गया। क्योंकि युद्ध भुवन-सुन्दरी के लिए हो रहा था, इसलिये निश्चय किया गया कि उसके पति प्रताप, और उसको उठा ले जानेवाले मोहन में परस्पर द्वन्द्व युद्ध हो। यह निश्चय ट्रोजनों को पसन्द था और ग्रीक लोगों को भी।

प्रताप और मोहन में द्वन्द्व युद्ध हुआ। परन्तु वह पूरा नहीं हुआ। बीच में ही मोहन कहीं गायब हो गया। यह सुना गया कि कामिनी देवता, उसको अपने प्रभाव से अदृश्य कर ट्रोय नगर ले गई थी। क्योंकि द्वन्द्व युद्ध समाप्त न हुआ था, इसलिये सन्धि में भी बाधा पड़ी। कंटक नाम के ट्रोजन वीर ने प्रताप पर बाण छोड़ा। यह देख देवमय आग बबूला हो गया। उसने कंटक को तो मार ही दिया। और प्रशंसन को भी घायल कर दिया।

इसके बाद, वीरसिंह ने वज्रकाय को द्वन्द्व युद्ध के लिए ललकारा। परन्त वज्रकाय ने उत्तर दिया कि वह युद्ध छोड़ चुका था।

वीरसिंह के साथ द्वन्द्व युद्ध करने के लिए ग्रीकों ने भूधव को चुना क्योंकि ग्रीक वीरों में वज्रकाय के बाद, भूधव ही सबसे अधिक बल्वान समझा जाता था।

वीरसिंह और भूधव का सूर्यास्त तक युद्ध होता रहा; पर उनमें न कोई जीता, न हारा। वे दोनों बराबर थे। सूर्यास्त के बाद, उन्होंने युद्ध बन्द कर दिया, और एक दूसरे की प्रशंसा कर, आपस में उपहार-पुरस्कार भी दिये।

दोनों पक्ष तात्कालिक रूप से युद्ध समाप्त करने के लिए मान गये। ग्रीकों ने युद्ध में हत व्यक्तियों को वहीं गाड़ दिया, और उस पर एक बड़ी दीवार खड़ी कर दी। उस दीवार के सामने एक गहरी खाई खोदी गई और उसके बाद पेड़ों की पंक्ति लगाई गई।

इसके बाद, युद्ध फिर शुरू हुआ। उस युद्ध में ग्रीकों की पराजय हुई। ट्रोजनों ने उनको खाई के पार दीवार के परली तरफ़ धकेल दिया। उस दिन रात को, ट्रोजनों ने ग्रीक नौकाओं के कुछ दूरी पर ही डेरा डाला।

ग्रीस के मुख्य सेनापति, राजा हताश हो गया। जैसे भी हो वज्रकाय को फिर युद्ध में उतारना होगा। नहीं तो वह जानता था कि फिर ज़रूर हार होगी। रत्नवर्ण, भूधव, रूपधर—और दो आदमी मिलकर वज्रकाय से मिलने गये। उनके द्वारा राजा ने वज्रकाय के पास कई उपहार भेजे। उसके पास यह भी ख़बर भिजवाई कि तुम अपनी भामिनी को ले जाओ। युद्ध में आकर शामिल हो।" उसको मनाने की बहुत कोशिश की गई।

राजा का भामिनी को, वज्रकाय को देने का एक और कारण भी था। हेमा,

जो उसके पिता के पास भेज दी गई थी, यह कहकर कि मुझे वहाँ अच्छा नहीं लगता, राजा के पास फिर वापिस आ गई थी। राजा के यहाँ बड़े आराम से रहती थी।

वज्रकाय ने राजा के दूतों से बड़े प्रेम से बातचीत की, पर वह अपना निश्चय बदलने के लिए राज़ी न हुआ। "कल सवेरे ही मैं अपनी नावों को लेकर, अपने देश वापिस चला जाऊँगा।" उसने दूतों से राजा के पास साफ़ साफ़ कहला भेजा। दूत निराश हो गये।

उस दिन रात ही, रूपधर और देवमय ने ट्रोजनों पर हमला करने की ठानी। वे हमला करने जा रहे थे कि रास्ते में उन्हें ट्रोजनों का भेजा हुआ गुप्तचर दिखाई दिया। दोनों वीरों ने उस पर हमला किया और मार-पीटकर उससे शत्रु के भेद मालूम कर लिये। उसे मार भी दिया।

उसने एक मुख्य भेद बता दिया। वह यह था:

"विच्छेद नाम का लेस देश का राजा, अपनी सेना और मलाई जैसे सफ़ेद घोड़ों
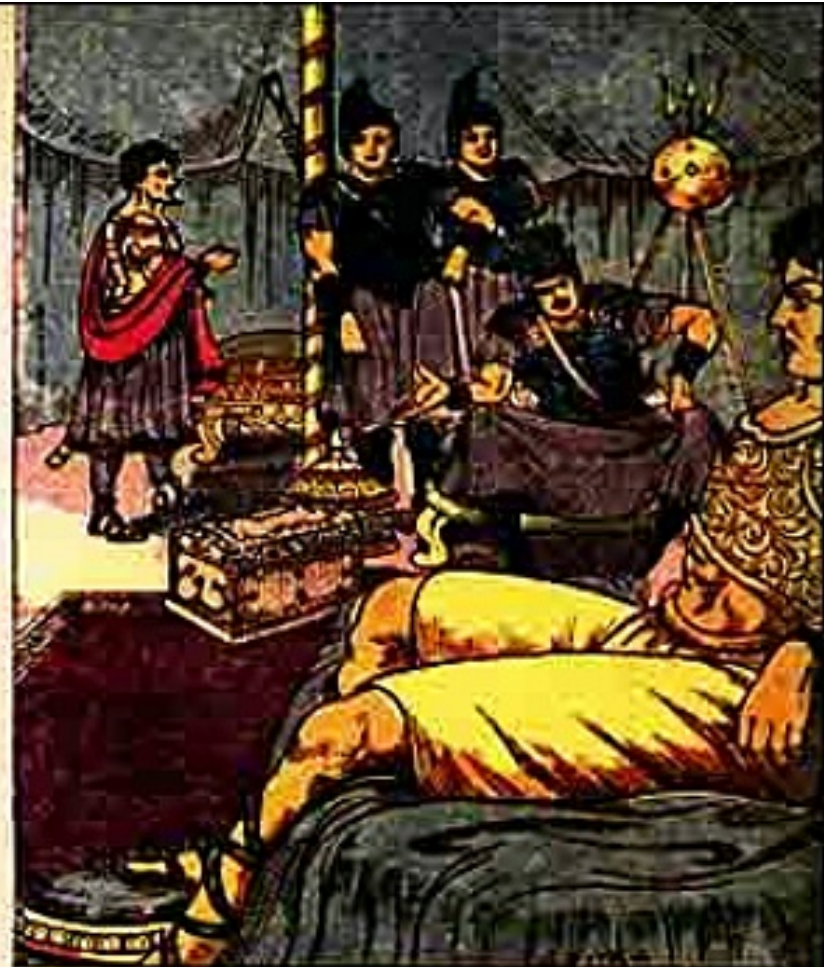
को लेकर, ट्रोजनों की छावनी में डेरा डाले हुए था। वे घोड़े हवा से भी तेज़ दौड़ सकते थे। यह प्रसिद्ध बात थी कि अगर वे घोड़े ट्रॉय नगर में चरें, और ट्रॉय नगर के दक्षिण में बहनेवाली स्कामन्दर नदी में पानी पियें, तो ट्रॉय को कोई नहीं जीत सकता था। विच्छेद के घोड़ों ने अभी ये दोनों काम न किये थे। ग्रीक वीरों को भेदिये से मालूम हो गया था कि विच्छेद ट्रोजन की छावनी के दाहिनी ओर के तम्बुओं में कई सैनिकों के साथ पड़ाव किये हुए था।

रूपधर और देवमय, भेदिये को मार कर, सीधे विच्छेद के डेरे पर गये। सोते हुए विच्छेद और उसके बारह नौकरों को उन्होंने मार दिया और उसके सफ़ेद घोड़ों को खोलकर वे अपने शिविर में रातों रात ले गये।

थोड़ी देर बाद, विच्छेद के नौकर, यह जानकर कि राजा की और उसके नौकरों की हत्या कर दी गई है, जिस रास्ते से आये थे, उस रास्ते वापिस चले गये। ग्रीकों ने उनका रास्ता रोका, और उनका काम तमाम कर दिया।

इतना होने के बावजूद, अगले दिन युद्ध भूमि में फिर ग्रीक लोगों की हार हुई। उससे पहिले उनकी इतनी बुरी तरह हार कभी न हुई थी। युद्ध में राजा, देवमय, रूपधर, आदि, सभी वीर ज़ख्मी हुए।

सिंह सरीखे, ट्रोजन वीरसिंह ने ग्रीकों को खदेड़ दिया। उनकी बनाई हुई दीवार को गिरा दिया। यही नहीं वह आगे जाकर ग्रीक सैनिक-पंक्ति में भी घुस गया। ग्रीक वीरों ने लाख कोशिश की, पर वे वीरसिंह को पीछे न हटा सके। वह बहादुरी से आगे बढ़ता गया।

भूधव का फेंका हुआ एक पत्थर वीरसिंह को लगा, वह एक क्षण छटपटाया, पर फिर संभलकर उठ गया। इस तरह उसने अपने सैनिकों का उत्साह बढ़ाया।

देखते देखते ट्रोजन ग्रीक नौकाओं के पास पहुँच गये। एक नाव को आग भी लगा दी। वह नाव चन्द्रप्रभु की थी। ग्रीक नौकाओं के ट्रोय नगर के तट पर आते ही भूमि पर उतरने वाला, और सबसे पहिले मारा जानेवाला ग्रीक वीर चन्द्रप्रभु ही था। [अभी और है]

दो ठग

एक देश में दो ठग रहा करते थे। दोनों साधुओं का वेश धर कर, गाँव गाँव फिरते, और लोगों से कहा करते कि हम भूत वैद्य कर सकते हैं। तावीज़ दे सकते हैं। इस तरह लोगों को धोखा देकर वे पैसा कमाते। इससे पहिले कि उनका धोखा किसी को मालूम होता, वे एक गाँव छोड़कर दूसरे गाँव चले जाते। बड़ा अपने को गुरु कहता, और छोटा शिष्य। इस तरह लोगों को धोखा देने से जो कुछ पैसा मिलता, उसे वे एकान्त में बैठकर आपस में आधा आधा बाँट लेते।

क्योंकि लोगों को धोखा देते थे, इसलिये वे हमेशा घूमते फिरते रहते। इस महीने में अगर किसी जगह थे तो दूसरे महीने किसी और जगह होते। फिर भी उनकी बदनामी उनके पीछे पीछे ही चलती थी।

जब गुरु-शिष्य एक गाँव में पहुँचे तो वहाँ एक ऐसा आदमी भी था जो उनका धोखा जानता था। उस आदमी ने उनको रोककर कहा—"तुम चोर हो, धोखेबाज़ हो।" उसने शोर मचाया। तुरत दस आदमी जमा हो गये। उन दोनों को खूब पीटकर गाँव से बाहर भगा दिया। इस तरह का यह पहिला ही अनुभव था।

इस घटना के बाद, गुरु शिष्य, अलग अलग अपने रास्ते पर चलने लगे। गुरु बहुत दिन सफ़र करने के बाद एक बड़े शहर में पहुँचा। वहाँ एक धर्मशाला के बराण्डे में, आँखें मींचकर उसने ध्यान किया।

इस बीच में, वहाँ बहुत बेकार आदमी जमा हो गये। थोड़ी देर बाद, आँखें खोलकर, सबको देखकर वह मुस्कराया।

श्री ए. आर. चौधरी

"स्वामी! आप कौन हैं? कहाँ से आ रहे हैं? आपके पास क्या शक्ति है?" दर्शकों ने पूछा।

"कोई ऐसी चीज़ नहीं, जो हम नहीं कर सकते हों! मन्त्र पढ़कर विभूति दी, तो सब रोग काफ़ूर हो जाते हैं। तावीज़ बाँधें तो कोई आपत्ति पास नहीं फटकती। सब प्रकार की बीमारियों को ठीक करते हैं।" दाढ़ी सहलाते हुए साधु ने कहा।

दर्शकों में से कई ने विभूति ली। कई ने तावीज़ भी लिये। यह कहकर कि हरिद्वार में मठ बनवाना है, स्वामी ने उनमें से कई से रुपये भी लिये।

जब उसने पैसे माँगे, तो वे लोग जो तावीज़ लेना चाहते थे, उन्होंने न लेना चाहा।

ठीक उसी समय शिष्य वहाँ आया। उसने गुरु को देखा। उसने तुरत गुस्से में कहा—"अरे! यहाँ भी आ मरे, कपटी सन्यासी कहीं का!" फिर उसने वहाँ जमा हुए लोगों से कहा—"आप इसका विश्वास न कीजिये। एकदम धोखेबाज़ है। कल परसों तक मैं इसका शिष्य

था। इसके धोखे में भी साझेदार था। अब मुझे अक्ल आ गई है। आप इसकी बातों में न आइये।"

यह सुन, कई ने नाक पर अँगुली धर ली। "अच्छा हुआ! कितना धोखेबाज़ है! कितना बड़ा धोखा है।"

पर जिन्होंने तब तक गुरु से तावीज़ ले ली थी, उन्होंने उसकी ओर मुड़कर कहा—"कोई दुष्ट आकर आपका इस प्रकार अपमान कर रहा है और आप यों चुपचाप बैठे हैं! इज़ाज़त हो तो हम उसको धुनकर रख दें।"

गुरु ने दाढ़ी ठीक करते हुए कहा—"अनाड़ी है—उसे अपने पाप का फल मिलेगा। आप उस पर हाथ न उठाइये।"

यह सुन शिष्य और बिगड़ गया। उसने गुरु की ओर मुड़कर कहा—"यह न कहोगे तो और क्या कहोगे? मैं अब तेरा भेद जानता हूँ। अगर किसी ने मुझे छुआ भी तो मैं तेरा भेद खोल दूँगा।"

लोगों को यह विश्वास होने लगा कि गुरु सचमुच धोखेबाज़ होगा। परन्तु इतने में ही गुरु ने खड़े होकर कहा—"अरे भाई! तुम बढ़ चढ़कर बातें कर रहे हो!

तुम समझ रहे हो कि ये नादान लोग तुम्हारा विश्वास करेंगे? सब देखते ही हैं भगवान। मूर्ख! अगर मैं चोर या ठग हूँ तो यह छत मुझ पर गिर जाये। और अगर तेरी बातें झूठी हैं तो कर तू अनुभव!" कहते हुए उसने कमण्डल में से थोड़ा पानी लेकर शिष्य पर छिड़का।

दूसरे क्षण शिष्य ठूँठ की तरह गिर पड़ा। छटपटाने लगा और शव की तरह काठ-सा हो गया।

"मर गया! मर गया!"—सब चिल्लाने लगे। "शक्तिशाली स्वामी की निन्दा करना कोई मामूली बात है। मामूली स्वामी जानकर जो कुछ मुँह में आया बक दिया! किये का फल मिल गया।" कई ने कहा।" "स्वामी! उसने अनजाने ग़ल्ती की है। उसे माफ़ कीजिये।" कुछ ने गुरु से कहा।

गुरु ने झोले में से एक तावीज़ लेकर शिष्य के हाथ में बाँधकर कहा—"मैंने तुझे क्षमा कर दिया है। उठ।"

शिष्य तब ऐसा उठा, जैसे सोकर जग रहा हो। चारों तरफ़ गड़बड़ी देख गुरु के पैरों पर पड़कर, रोते हुए उसने कहा—"स्वामी! क्षमा कीजिये।"

"क्षमा कर दिया। जाओ। फिर कभी स्वामियों को न छेड़ना।" गुरु ने कहा।

शिष्य आँखें मलता हुआ कहीं चला गया। फिर लोगों ने तावीज़ें खरीद कर बहुत-सा रुपया गुरु को दिया।

तब गुरु उस नगर को छोड़कर चला गया। थोड़ी दूर पर शिष्य उसको दिखाई दिया। उसने अपने कमाई का आधा हिस्सा उसे दे दिया। फिर दोनों अलग अलग चलते गये, ताकि एक और शहर में यह नाटक फिर खेला जा सके।

मित्र-भेद

राज कुमारी की बातें सुन
लिया जुलाहे ने यह सोच,
करना ही है कुछ अब मुझको
तजकर मन का भय-संकोच!

इसी वेष में जाकर के मैं
कर दूँगा रिपुओं का नाश,
भग जाएँगे मुझे देख सब
है यह मुझको दृढ़ विश्वास।

दाँतों में विष नहीं अगर हो
तो भी सर्प बनाता भीत,
ठाठ ऊपरी लख भरमाता
विदित जगत की यह है रीत।

फिर तो उसने कहा विहँस कर—
'करो न प्रिय चिंता तुम लेश,
कल ही वैरी के दल को मैं
कर दूँगा खुद ही निःशेष।'

दिवस दूसरा आया आखिर
हुई दिशा पूरब की लाल,
बैठ जुलाहा गरुड़यान पर
भी निकला रण को उस काल।

यह सब लखकर लगे सोचने
घट घट के वासी भगवान,
सफल अगर यह हुआ नहीं तो
होगा मेरा ही अपमान।

बैठ जुलाहे के तन में झट
कर डाला सूना मैदान,
बाद धरा पर उतरा फिर से
गरुड़ सहित नक़ली भगवान।

सबने उसको समझ विष्णु ही
किया प्रेम से पूजन अर्चन,
राजा ने भी ब्याह रचाकर
पुत्री को कर दिया समर्पण!

इसीलिए हे करटक, जानो
मुश्किल भी होता आसान,
अगर बुद्धि से और युक्ति से
करें लक्ष्य अपना सन्धान!"

श्री 'भारतीभक्त'

दमनक बोला—"सो तो भाई,
कहते तुम सचमुच ही ठीक,
लेकिन सींकी से क्या कोई
खींच सका पत्थर पर लीक?

संजीवक तो समझदार है
और भयंकर है मृगराज,
दुर्बल प्राणी होकर नाहक
कर दोगे उनको नाराज।"

करटक बोला—"दुर्बल तन है,
नहीं बुद्धि से हूँ मैं हीन,
किया नाग का नाश युक्ति से
था यद्यपि कौआ बलहीन।

बरगद का था पेड़ पुराना
रहते थे उस पर दो काग,
और तने के कोटर में था
डेरा डाले काला नाग।

नहीं काग के अंडे कोई
बचने देता था वह क्रूर,
एक एक कर खा जाता सब
जब तम छा जाता भरपूर।

बहुत दुखी थी कागों की वह
जोड़ी खो अपनी सन्तान,
सदा फ़िक्र उसको रहती थी
कैसे हो इससे अब त्राण।

सोच विचार बहुत करने पर
सूझा उनको एक उपाय,
मिले स्यार से जा वे दोनों
हाल सुना सब, पूछी राय।

हँसकर उनसे कहा स्यार ने—
"यह भी क्या है मुश्किल यार;
करती संभव युक्ति उसे ही
कर न सके जिसको तलवार।"

इतना कहकर तभी काग के
कही कान में झट कुछ बात,
जिससे कौए उड़े नगर को
होकर तब अति पुलकित गात।

उड़ते उड़ते जा पहुँचे वे
राजमहल के उस उद्यान,
जहाँ साथ सखियों के रानी
करती थी जल में स्नान।

तट पर गहने-वस्त्र रखे थे
दूर खड़े थे पहरेदार,
मौका पाकर दबा चोंच में
उड़ा काग सुन्दर इक हार।

देख दृश्य यह पहरे के सब
सैनिक दौड़े बदहवास,
लेकिन कागा उड़ा वेग से
गहना गिरा नाग के पास।

पीछा करते सैनिक आये
उस बूढ़े बरगद के पास,
देखा हार सलामत लेकिन
नाग एक बैठा है पास।

मार मार कर डंडों से फिर
किया नाग का जीवन अंत,
और बाद में हार उठाकर
गये सभी वे लौट तुरन्त।

यों जब आनन फानन में ही
हुआ नाग का काम तमाम;
कौए ने तब कहा स्यार से
'धन्य, तुम्हें है लाख सलाम!'
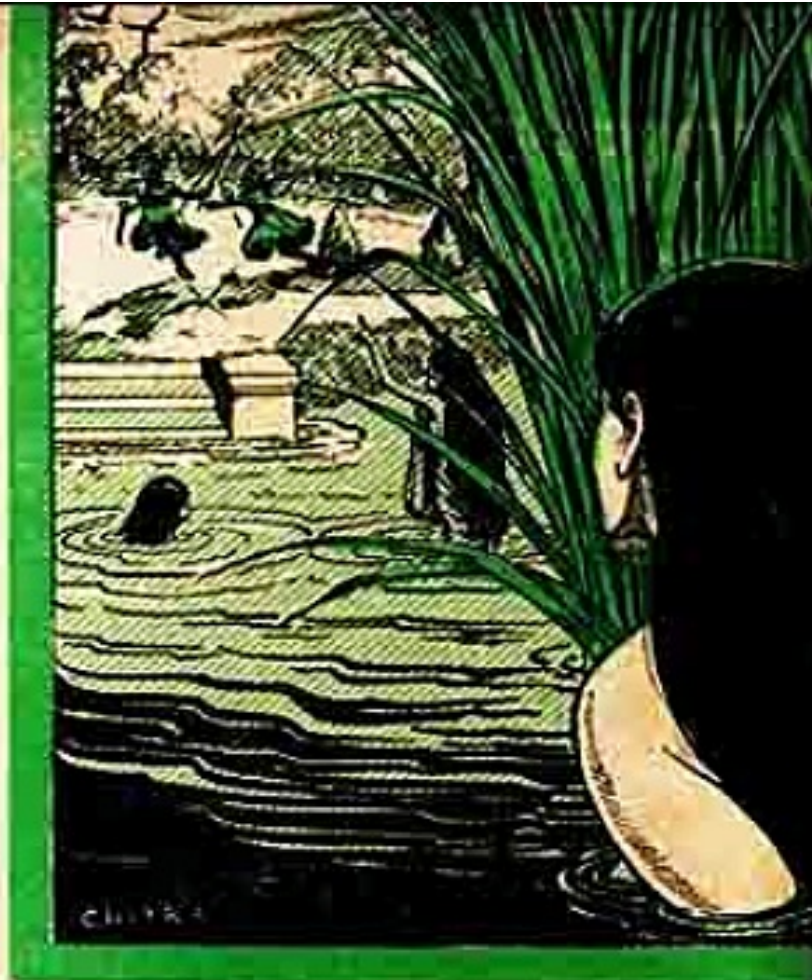
उत्तर इस पर दिया स्यार ने—
'यार अकल के ये सब खेल
काम सफल होगा ही निश्चय
सूझ-बूझ का यदि हो मेल।

एक कहानी याद आ रही
सुनो जिसे तुम देकर कान,
चतुर केकड़े ने ली कैसे
थी पापी बगुले की जान!

एक बड़ा जंगल था जिसके
कहीं तलैया थी अति पास,
उसमें मछली, मेढ़क, कछुए
और केकड़ों का था वास

बगुला एक वहाँ था बूढ़ा
खड़ा खड़ा रहता चुपचाप,
पकड़ न पाता मछली था वह
दुर्बलता के कारण आप।

कैसे पेट भरे यह चिन्ता
विकल किये जाती थी हाय,
सूझा एक दिवस को आखिर
उसको सुन्दर एक उपाय।

आँसू गिरा गिरा कर दृग से
लगा रुदन का करने अभिनय,
सुनकर जिसको निकट केंकड़ा
आया तजकर मन का सब भय।

पूछा उसने—"क्यों मामाजी,
रोते हो यों हो बेज़ार?"
बगुला मन में हुआ बहुत खुश—
चाल न उसकी यह बेकार;

लेकिन दुखी बना ऊपर से
बोला—"कहूँ भला क्या हंत!

मैं सन्यासी, चिन्ता क्या है
हो जाये यदि जीवन अंत?

लेकिन मैं तो दुखी आज हूँ
करके तुम लोगों का ख्याल,
भरी तलैया सूख जायगी
क्योंकि पड़ेगा शीघ्र अकाल।

फिर क्या होगा हाल सभी का
जल ही है जिनका आधार,
यही सोच कर अतिचिंता से
सिहर रहा मैं बारम्बार।

नहीं मुझे हिंसा अब भाती
करता सबसे निश्छल प्रेम,
परहित ही में मन लगता है
दया-धरम ही मेरा नेम।

इसीलिए तुम सबके कारण
मन करता है हाहाकार!"
यों कहता वह लगा बहाने
फिर नक़ली आँसू की धार।

मुण्डा जाति की लोक कथा—

एक पैसे में दुल्हिन

प्रेषक : आ. न. उपाध्या, एम. एस.सी., लखनऊ

किसी गाँव में बण्डल नामक एक बालक रहता था। एक बार बण्डल अपनी माँ से बोला—"माँ, मुझे एक पैसा दे दो। मैं मेले से, अपने लिए दुल्हिन लाऊँगा।" माँ उसकी इस भोली बात पर हँस पड़ी और उसने उसे एक पैसा दे दिया।

मेले में बण्डल को खिलौनेवाले की दूकान पर एक गुड़िया बहुत ही पसन्द आई। उसने पैसा देकर गुड़िया मोल ले ली और घर चल दिया।

मार्ग में, बण्डल एक वट-वृक्ष के नीचे रुका और गुड़िया से बोला—"देखो अब मैं थक गया हूँ। आगे का रास्ता तुम्हें अपने पैरों से चलना होगा।" गुड़िया ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह खीझ उठा और अपनी लकड़ी से गुड़िया की खूब मराम्मत की और उसे पास की झाड़ी में फेंक दिया।

वहाँ एक खरगोश छिपा हुआ बैठा था। गुड़िया के वहाँ गिरने से वह झाड़ी में से निकल कर भागा। बण्डल यह समझा कि उसकी दुल्हिन ही भागी जा रही है। वह उसके पीछे दौड़ा। ख़रगोश भागते भागते एक खेत में जा छिपा। तभी खेत में मड़ुवा काटती हुई एक सुन्दर लड़की उठकर खड़ी हो गई। बण्डल उस लड़की को ही अपनी दुल्हिन समझ बैठा और हाथ पकड़कर घसीटने लगा। लड़की लड़के की इस उद्दण्डता पर बिगड़ पड़ी। अंत में यह तय पाया की लड़की के माता-पिता के पास चलकर ही फ़ैसला कराया जाए।

रास्ते में, उन लोगों को राजा का बेटा मिला। बण्डल राजकुमार से बोला—"यह मेरी दुल्हिन है; परन्तु, मेरे साथ नहीं चलती है।"

राजकुमार ने लड़की के पिता के यहाँ जाकर कहा—"तुम अपनी लड़की को बण्डल के साथ भेज दो।" किसान डर गया और उसने अपनी लड़की को डोली में बिठाकर बण्डल के साथ कर दिया। जब उसे लेकर बण्डल घर पहुँचा तो उसकी माँ को यह देखकर बड़ा अचम्भा हुआ। उसने अपने बेटे-बहू का धूमधाम से स्वागत किया।

होली

श्री 'हर्ष'

★

चंद्र-पूर्णिमा फागुन के दिन।
दाता-भिक्षुक सब ही इस दिन ॥
मालिक-नौकर, बाबू – अफसर।
मानों उनमें हो नहिं अन्तर ॥

काम-काज सब बन्द करेंगे।
होली का हुड़दंग करेंगे ॥
लीला राधा-कृष्ण करेंगे।
अंगों में गुलाल मलेंगे ॥
कहो कैसा सुन्दर त्योहार।
है कितना अच्छा त्योहार ॥

अम्बर में यदि चाँद न आता!

श्री सुरेशचन्द्र उपाध्याय, होशंगाबाद.

कौन गगन में हास रचाता?
कौन धरा में मधु बरसाता?
कौन पथिक को राह बताता?
अम्बर में यदि चाँद न आता!

कोयल किसको गीत सुनाती?
किसे कुमुदिनी लख सुख पाती?
कौन प्यार शिशुओं का पाता?
अम्बर में यदि चाँद न आता!

कैसे दूर अंधेरा होता?
कैसे छवि का बहता सोता?
कौन चाँदनी फिर छटकाता?
अम्बर में यदि चाँद न आता!

दूध बताशे कौन खिलाता?
किसे देख मुन्नू सो जाता?
सब का 'मामा' कौन कहाता?
अम्बर में यदि चाँद न आता!

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

मई १९५७ :: पारितोषिक १०)
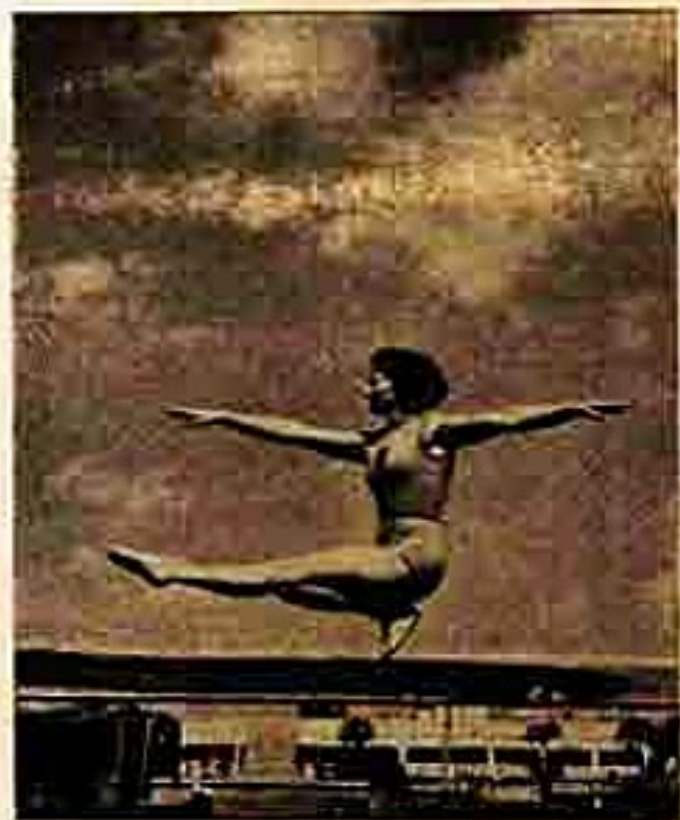
कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें ।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ५, मार्च '५७ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वड़पलनी :: मद्रास - २६

मार्च – प्रतियोगिता – फल

मार्च के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनकी प्रेषिका को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो:
'धर होंठों पर थाल घुमाऊँ!'

दूसरा फ़ोटो:
'बोतलों का सिर ताज सजाऊँ!'

प्रेषिका: कुमारी राज कौल, रेल्वे रेस्ट हाउस, भींटबी

प्रो. पी. सी. सरकार

घड़ी गायब करने का जादू बड़ा दिलचस्प होता है। जब दो साल पहिले मैं जर्मनी गया था तो मेरे मित्र ने चाहा कि मैं उनकी घड़ी गायब कर दूँ। एक बार एक जादूगर ने उनकी घड़ी गायब कर अन्त में डबल रोटी से निकाली थी।

इस जादू को करनेवालों को उन्होंने ज़िन्दगी में कहीं न देखा था। मैंने मुस्कराकर कहा—"हमारे देश में आल इन्डिया मेजीशियन क्लब है। उसके पाँच सौ सदस्य हैं। वे सब यह जादू कर सकते हैं।" उन्हें विश्वास न हुआ। उन्होंने कहा कि जो कोई उनकी घड़ी गायब कर देगा, वह घड़ी उसी को दे देंगे। मैं द्विविधा में पड़ा। अगर रंगमंच होता, तो उनकी घड़ी ही नहीं, उनकी कार को भी गायब कर देता। परन्तु एक मित्र के घर, बिना कुछ साज-समान के कैसे गायब करता? मैंने कहा—"अब नहीं, परसों भोजन के समय इसे गायब कर दूँगा।"

उस दिन वे मेरा मखौल उड़ाने लगे। मैंने अपनी जेब में से रूमाल निकाला। जैसे चित्र में दिखाया गया है, उसके चारों कोनों को पकड़कर थैला-सा बना लिया और उसमें मैंने सब के सामने घड़ी डलवा दी।

सब ने देखा कि घड़ी उसमें है। मैंने उस घड़ी के साथ, उस रूमाल को एक को दिया। उसने उसे खोजा—यह कहकर कि उसमें घड़ी है, उसने ज़ोर से पकड़ लिया। तब मैंने रूमाल लेकर झटका, घड़ी गायब हो गई थी।

सबने सोचा कि मैं रोटी मँगवा दूँगा। पर जब सबने देखा कि घड़ी मेरे हाथ में ही बँधी है, तो उनको अचरज हुआ। मैंने घड़ी उतारकर उन्हें दी। वे कुछ न बोल सके, शर्त के अनुसार उन्होंने घड़ी मुझे दे दी।

अब मैं इसका रहस्य बताता हूँ। चेक डिज़ाइन के एक ही रंग के दो रूमाल लेने चाहिये। उनको चारों ओर से सिलवा लेने चाहिये। यह चित्र में साफ़ दिखाया गया है। परन्तु एक कोना खाली छोड़ देना चाहिये। —चित्र में A चिन्ह वाली वैसी ही जगह है। इस तरह वह रूमाल एक प्रकार का थैला बन जाता है। जब रूमाल के चार कोने पकड़ लिये जाते हैं, तो खाली जगह एक तरफ़ आ जाती है। उस घड़ी को उस खाली छेद में से अन्दर डाल देना चाहिये। देखनेवालों को कुछ नहीं पता लगे। वे सोचेंगे कि एक ही रूमाल है और उसमें घड़ी है।

जादूगर गम्भीरता से रूमाल से मुँह पोंछ कर, उसे जेब में रख लेता है। कहने की ज़रूरत नहीं कि उसके साथ घड़ी भी जेब में चली गई है। घड़ी गायब करने का मेरा तरीका यही है। पहिले उसकी घड़ी देखकर ठीक उसी की घड़ी की तरह घड़ी खरीद ली। फिर मैं यह जादू दिखाने को तैयार हुआ। यह जादू करते समय मैंने मित्र की ही घड़ी हाथ में बाँध रखी थी और सही घड़ी को रूमाल में डालकर गायब किया था।

प्रेक्षक तो इस दूसरी घड़ी के बारे में जानते ही नहीं होंगे। इसलिये वे सन्देह भी न कर सकेंगे। जब फिर आप घड़ी हाथ पर दिखायेंगे, तो हो सकता है कि उनको सन्देह हो! पर चूँकि वह पहिली घड़ी ही है, इसलिये मज़े में जादू हो जाएगा।

समाचार वगैरह

युगोस्लाविया में मज़दूरों तथा अन्य कर्मचारियों को सरकार की तरफ़ से प्रत्येक बच्चे के लिए भत्ता दिया जाता है। यह भत्ता तब तक मिलता है, जब तक कि बच्चा पन्द्रह साल का नहीं हो जाता। इसके बाद यदि बच्चा अपनी पढ़ाई ज़ारी रखता तो पचीस वर्ष की आयु तक भत्ता मिलता रहता है।

* * *

सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी के लेनिनग्राद-स्थित पुस्तकालय को पुस्तक विनिमय द्वारा भारत से विविध विषयों की लगभग एक सौ पत्रिकाएँ प्राप्त होती रहती हैं। इसके बदले में पुस्तकालय भारतीय विज्ञान-संस्थानों, संघटनों एवं विश्व विद्यालयों को ५८ पत्रिकाएँ, सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी के २०० से ऊपर क्रमबद्ध प्रकाशन आदि भेजता है।

* * *

अमेरीका में शिकागो की "बैल एण्ड होवेल कम्पनी" ने एक ऐसा कैमरा तैयार किया है जो आँख की तरह काम कर सकता है। इस कैमरे का लेन्स हर तरह की रोशनी में अपने आप काम कर सकता है। इस नये
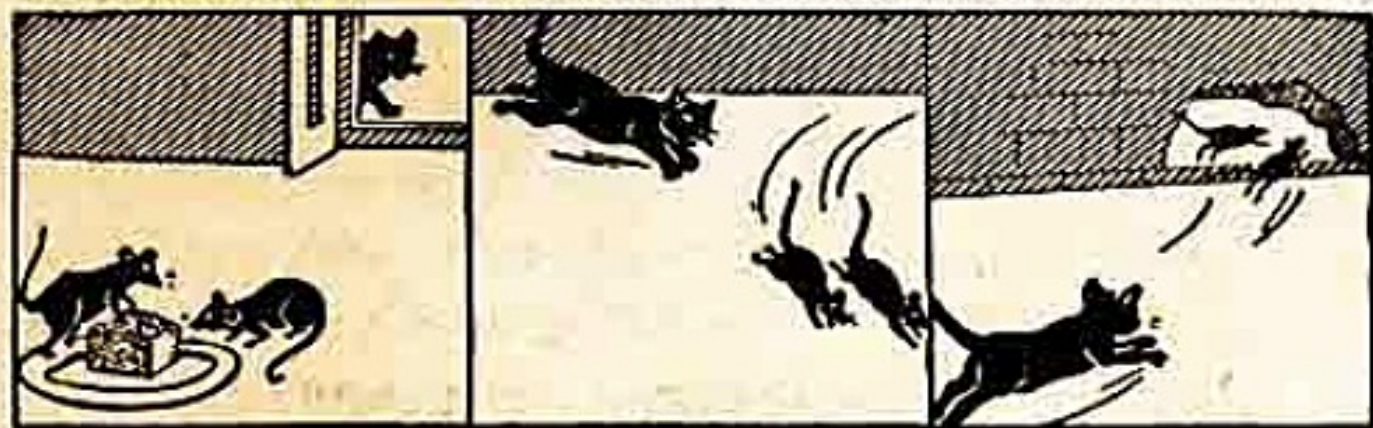
कैमरे में रोशनी का हिसाब लगा लेने और उसी अनुपात से अपने लैन्स को बदलने की व्यवस्था है।

*　　*　　*

उत्तर प्रदेश सरकार ने द्वितीय पंच वर्षीय आयोजना के अधीन आगरा और हरिद्वार में इस वर्ष भिखारियों के लिए रु. १,८४,६०० की लागत से दो कर्मशालाएँ खोलने का निश्चय किया है। इन संस्थाओं की स्थापना का उद्देश्य भिखारियों को काम-धन्धा सिखाकर स्वावलम्बी बनाना है।

*　　*　　*

पिछले जनवरी मास में राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद के हाथ से कुरुक्षेत्र संस्कृत विश्व विद्यालय का शिलान्यास किया गया, जिसकी कुल लागत अनुमानतः एक करोड़ ३५ लाख रुपये की होगी।

पंजाब की सरकार ने द्वितीय पंच वर्षीय योजना की अवधि में इस विश्व विद्यालय के लिए १० लाख रुपये स्वीकृत किये हैं। महाभारत युद्ध की इस ऐतिहासिक भूमि पर ३२० एकड़ क्षेत्र में कुरुक्षेत्र संस्कृत विश्व विद्यालय की स्थापना होगी।

*　　*　　*

बनारस में दियासलाई का एक सहकार्य कारखाना बनाने के लिए भारत सरकार ने रु. २,८५,७०० देना स्वीकार किया है।

*　　*　　*

मध्य प्रदेश के होशंगाबाद में सामुदायिक योजना क्षेत्र के अनेक गांवों में इधर दो प्रारंभिक योजनाएँ शुरू की गयी थीं। इन योजनाओं का उद्देश्य ग्रामणी महिलाओं और बच्चों के जीवन को सुखी और भरापूरा बनाना है।

चित्र - कथा

एक दिन रात को दास और वास सो रहे थे। आधी रात के समय उन्हें कोई आवाज़ सुनाई दी। वास ने दास से डरते हुए कहा—'कोई चोर होगा!' दास और भी अधिक डर गया! उसने कहा—"वह सचमुच चोर ही होगा!" 'टाइगर' भी वहीं था। वह फौरन बाहर आया और पहरा देनेवाले पुलिस के सामने भोंकने लगा। पुलिस ने 'टाइगर' के साथ घर में आकर चोर पकड़ा। उसके बाद पुलिस इनस्पेक्टर ने कहा—"दास और वास से 'टाइगर' ही बड़ा बहादुर है।"

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press (Private) Ltd., and Published by him for Chandamama Publications, from Madras 26—Controlling Editor: SRI 'CHAKRAPANI'

Photo by T. S. Satyan

पुरस्कृत परिचयोक्ति

'बोतलों का सिर-ताज सजाऊँ!'

प्रेषिका :
कुमारी राज कौल, भटिंडा।

CHANDAMAMA (Hindi) MARCH 1957 Regd. No. M. 5452

भुवन - सुन्दरी